न्दामामा
मई १९६५
GDP

बच्चों के लिये
स्वास्थ्यवर्द्धक
टॉनिक
लाल-शर
(डाबर बालामृत)
बच्चों के सुन्दर स्वास्थ्य और शारीरिक विकास के लिये मन-पसन्द मीठी पुष्टई।
८२ वर्षों से जन-कल्याण
में संलग्न
डाबर
(डा० एस० के० बर्म्मन) प्राइवेट लि०,

मई १९६५

★

विषय - सूची

★

ग्राहकों को एक ज़रूरी सूचना!

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नये पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक

चन्दामामा प्रकाशन

वडपलणी :: मद्रास - २६

हमारी कहानी
हमारा फिल्म
हमारा घर

एल ऑण्ड सी हार्डमुथ (ग्रेट ब्रिटेन) लिमिटेड

जुलाई १९६५ से

"चन्दामामा" के चन्दे में परिवर्तन

आजकल के अधिक कर व तंगियों के कारण मूल्य बहुत बढ़ गये हैं। इसलिए "चन्दामामा" के मुद्रण का खर्च भी अधिक हो गया है। इस कारण हम विवश हो, जुलाई १९६५ से "चन्दामामा" का दाम ७५ पैसे कर रहे हैं।

एक प्रति		सालाना चन्दा एक वर्ष		चन्दा दो वर्ष
०-७५ **पैसे**	*	रु. ८-४०	*	रु. १५-६०

वर्तमान चन्दादारों पर यह वृद्धि नहीं लागू होगी। परन्तु चन्दा खतम होने पर, उनको परिवर्तित दाम पर, चन्दा देना पड़ेगा।

हम आशा करते हैं कि हमेशा की तरह "चन्दामामा" को आपका समर्थन मिलता रहेगा।

—प्रकाशक

२५ से अधिक वर्षों से लोकप्रिय
सोल
डिस्ट्रिब्यूटर्स:
जे. एल. मोरिसन,
सन एण्ड जोन्स
(इण्डिया) प्राइवेट लि.
बम्बई - दिल्ली - मद्रास
कानपुर - कलकत्ता
Asha
FACE POWDER
SNOW
आशा स्नो, फेस पाउडर, काजल तथा अन्य सौंदर्य प्रसाधन
Unique-M-2-HD

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

"चन्दामामा" यद्यपि मुख्यतः कथा मासिक है, तो भी हम इसमें प्रायः ऐसी सामग्री भी देते आये हैं, जिससे हमारे पाठकों का लौकिक ज्ञान बढ़े। कथायें भी शिक्षाप्रद होती हैं।

ऐसा ही एक स्तम्भ "भारतीय इतिहास" है। इसमें संक्षिप्त रूप से, भारत का इतिहास दे रहे हैं ताकि एक भारतीय, किशोरवस्था में अपनी ही पृष्टभूमि जान सके। "संसार के आश्चर्य" में, संसार के विशेष स्थलों के बारे में हम जानकारी दे रहे हैं। नेहरू की जीवनी भी इसी श्रेणी में आती है। प्रत्येक भारतीय के लिए नेहरू के जीवन को जानना हम आवश्यक मानते हैं।

वर्ष: १६ मई १९६५ अंक: ९
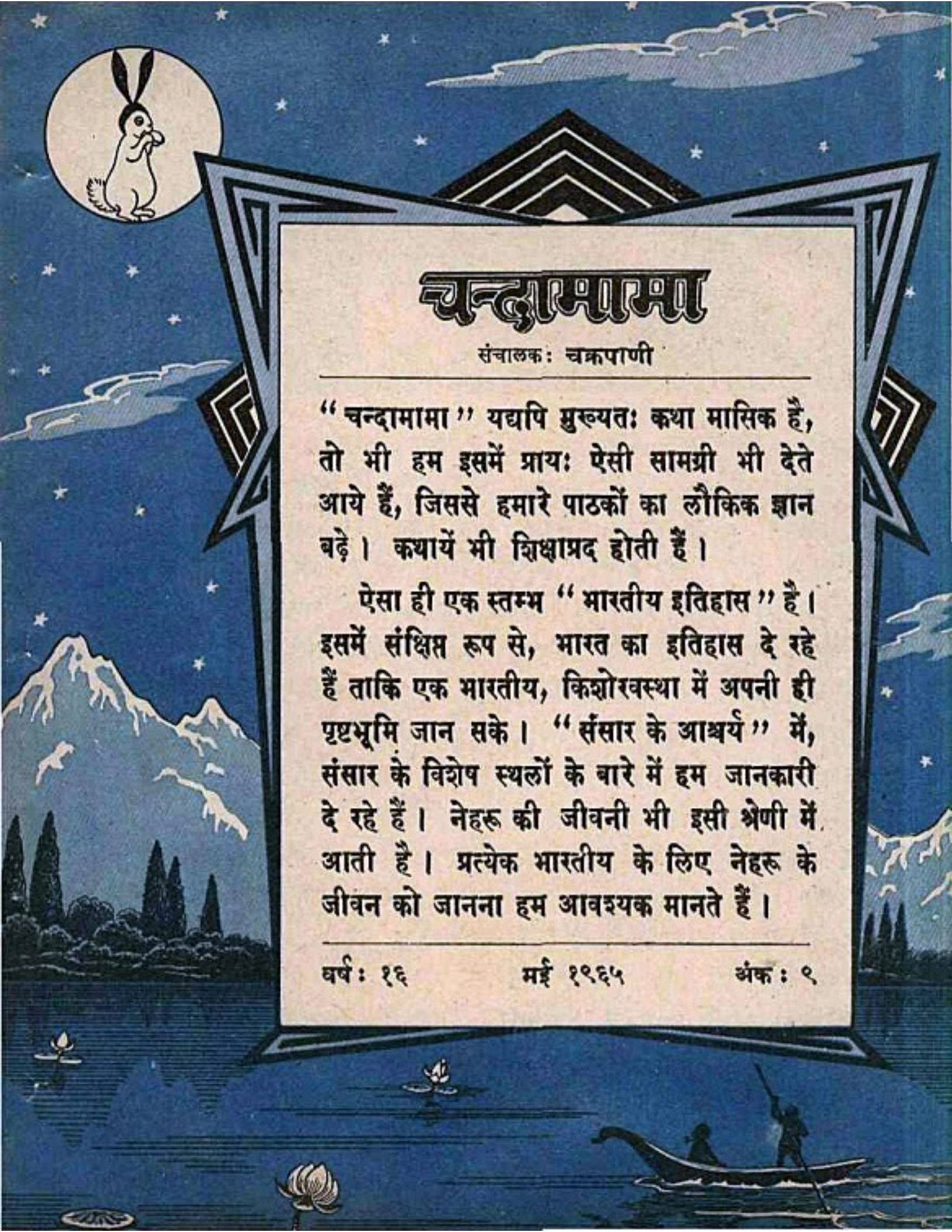
भारत का इतिहास

बैरामखान से छुटकारा पाने के बाद भी दो वर्ष तक (१५६०-१५६२) अकबर पूर्णतः स्वतन्त्र न हो सका। उसको पालनेवाली माँ और उसका लड़का आदम खान बड़ा रौब दिखाने लगे। उनका रौब अकबर बहुत दिन तक सहता रहा। फिर अकबर ने आदमखान को मरवा दिया।

चालीस रोज बाद उसकी माँ पुत्र शोक में इतनी दुःखी हो उठी कि वह भी मर गई।

१५६२ मई में अकबर पूरी तरह स्वतन्त्र हो गया। साम्राज्य निर्माण में अकबर की तरह कोई न था। वह अपने ४० वर्ष के शासन में राज्य को निरन्तर बढ़ाता गया। उसने एक एक प्रान्त को किस प्रकार जीता?

मध्य प्रदेश में उत्तर प्रान्त के गरह कटंग राज्य का राजा वीर नारायण था। वह छोटा था। उसकी माँ का नाम दुर्गावती था। उसी पर राज्य का भार था। वह अपने असाधारण सौन्दर्य और पराक्रम के लिए प्रसिद्ध थी।

१५६४ में इस राज्य पर हमला करने के लिए अकबर ने असफखान को भेजा। युद्ध में असफखान जीता।

दुर्गावती ने पराजय को अधिक अपमानजनक समझकर आत्महत्या कर ली। वीर नारायण जब तक जीवित रहा युद्ध करता रहा, फिर वह भी मर गया।

अकबर ने इस राज्य का कुछ भाग अपने वश में कर लिया और बाकी उसी राजवंश को दे दिया। अकबर

ने जो भाग लिया था, वही बाद में भूपाल बना।

उत्तर भारत में राजपूतों का प्रभाव तब तक भी अधिक था। भारत के इतिहास में राजपूत तब भी मुख्य भूमिका अदा कर रहे थे। अकबर जानता था कि बिना राजपूतों की सहायता से वह अपना साम्राज्य नहीं बना सकता था।

मुगल, पठानों की तरह "यहीं के नहीं थे" वे ऊपर से आये थे। इसलिए अकबर ने राजपूतों की मैत्री पाने के लिए भरसक कोशिश की। उदारता और बुद्धिमत्ता दिखाकर, उसने राजपूतों की सहानुभूति और सहायता इस मात्रा में पायी कि उन्होंने उसके साम्राज्य की अत्यन्त सेवा की। उनका शौर्य और मुगलों की राजनैतिक चतुरता पर अकबर का साम्राज्य बना था।

१५६२ अकबर (जयपुर) का राजा, राजा बिहारी मल अकबर के सामने झुक गया और उसने अकबर के साथ विवाह सम्बन्ध भी स्थापित किये। वह अपने लड़के भगवानदास और पोते मानसिंह को लेकर आगरा गया। अकबर की नौकरी
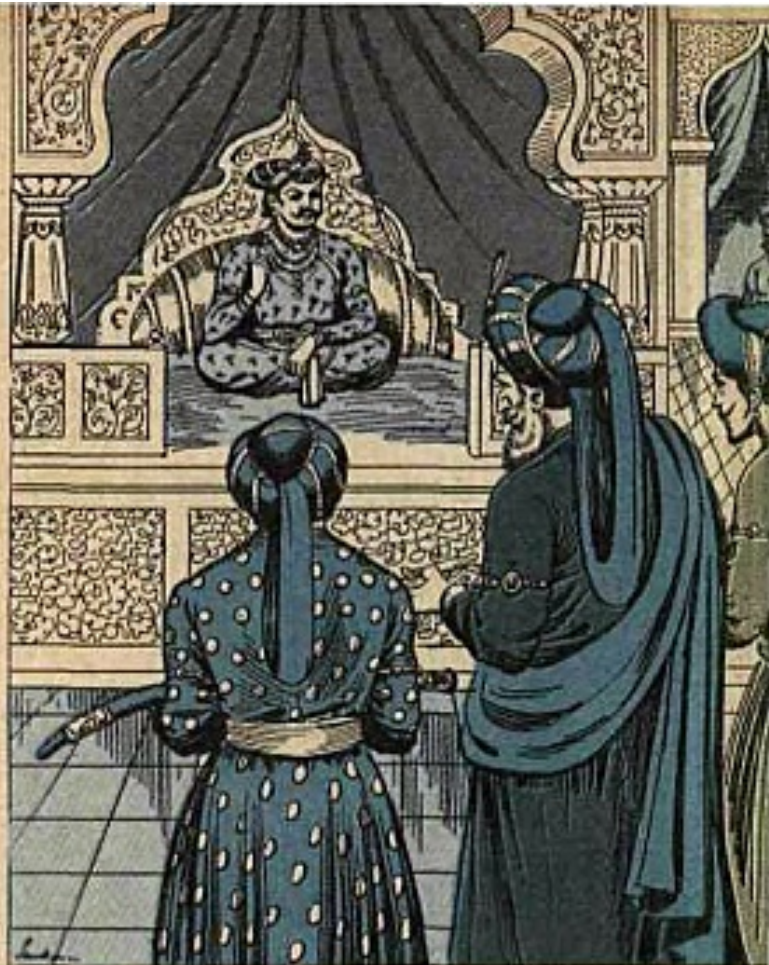
करके, वह पाँच हज़ार सेना का अधिकारी बना। उसके लड़के और पोते ने भी सेना में नौकरी कर ली। इस तरह चार पीढ़ियों तक, मुगलों को भारतीय वीरों की सेवा मिली।

परन्तु मेवाड़ ने सिर न झुकाया और उन्होंने मालवा से भागकर आये हुए बाज बहादुर को भी आश्रय दिया।

मेवाड़ की स्वतन्त्रता अकबर को अखर रही थी। परन्तु राणा साँगा के बाद, उसके लड़के उदयसिंह का असमर्थ होना और उनमें परस्पर कलह

का हो जाना अकबर के लिए लाभप्रद साबित हुआ। इसे अच्छा मौका समझकर, वह मेवाड़ पर आक्रमण करने की तैय्यारियाँ करने लगा।

अक्टूबर १५६७ में, अकबर ने चितौड़ के किले को घेरा। उदयसिंह अपने किले को भाग्य के भरोसे छोड़कर, पहाड़ों में भाग गया। पर उसकी सेना के जयमल्ल और पट्टा जैसे वीर, चार महीने तक—अक्टूबर २०, १५६७ से, फरवरी २३, १५६८ तक अकबर की सेना से लोहा लेते रहे।

आखिर, जयमल्ल अकबर की बन्दूक की गोली का शिकार हुआ। फिर पट्टा भी मारा गया। बाकी भी तलवार लेकर, लड़-लड़कर मर गये। एक भी नहीं बचा। राजपूत स्त्रियाँ भी, बिना शत्रुओं के हाथ पड़े, चिताओं पर जलकर सती हो गईं।

फिर अकबर ने चितौड़ के किले में सेना के साथ प्रवेश किया। चितौड़ का पतन देखकर, भयभीत होकर, कई राजपूतों ने अकबर का आधिपत्य स्वीकार किया।

१५६९ में रणथम्भोर के राजा ने अपने किले की चाबी अकबर को दे दी और वह अकबर की नौकरी में आ गया। उसी साल कालिंजर के राजा भी अकबर की शरण में आया। कालिंजर का पतन मुगल साम्राज्य के विस्तार में एक प्रमुख घटना समझी जाती है।

१५७० में बीकानेर जैसलमेर राजाओं ने मुगल सम्राट के सामने घुटने ही नहीं टेके, अपितु उन्होंने अपनी लड़कियों का उसके साथ विवाह भी किया।

नेहरू की कथा

[१०]

जवाहरलाल नेहरू पहिली बार १९२१ में जेल गये। उससे पाँच वर्ष पूर्व १९१६ में वसन्त पंचमी के दिन दिल्ली में उनका विवाह हुआ था। वधु का नाम कमला कौल था। कौल कश्मीरी थे। दिल्ली में स्थायी रूप से रहने लगे थे। कमला पतली और ऊँची थीं।

उनका स्वभाव और प्रवृत्तियाँ कुछ कुछ पति ही की तरह थीं। अपरिचितों के सामने या उन लोगों के सामने जो उनको पसन्द न थे, वे यकायक चुप-सी हो जाती थीं। पर आत्मीयों और मित्रों से बड़े खुलकर बातें करती थीं। वे काफ़ी सूझ बूझवाली थीं। पर खास पढ़ी लिखी न थीं। उनके ख्याल साफ़ थे और वे उनको स्पष्ट व्यक्त कर लेती थीं।

उनका प्रेम विवाह नहीं था। बड़ों ने वह विवाह निश्चित किया था। जवाहरलाल नेहरू की माँ ने किसी भोज, सहभोज में कमला के सौन्दर्य को निहारा और तभी निश्चय कर लिया था कि उसको अपनी बहू बनायेंगी।
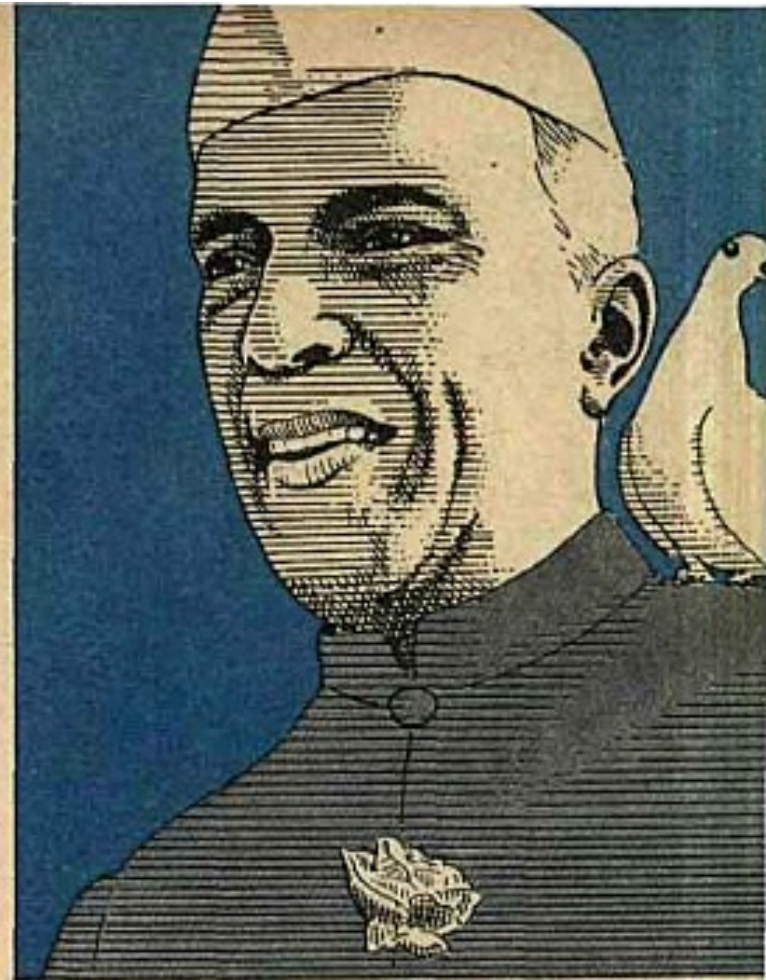
कमला जब बहू बनकर आयीं, तो मोतीलाल के घर के वातावरण में राजनीति के कारण अभी तूफ़ान नहीं आया था।

चार एक साल मोतीलाल ने रईसों की तरह जिन्दगी व्यतीत की। महल-सा घर, बहुत-से नौकर-चाकर, कुत्ते, घोड़े, वाहन वगैरह। घर में बहुमूल्य कालीनें, अमूल्य चीनी और शीशे के बर्तन, अस्तबलों में घोड़े। बच्चों के लिए अलग टट्टू थे।

आनन्द भवन में आने जानेवाले कितने ही अतिथि थे।

विवाह के समय जवाहरलाल के मन में राजनैतिक द्वन्द्व-सा चल रहा था। उसको उभरने के लिए पाँच वर्ष लगे।

जब वे जेल गये, तो उनका मानसिक तनाव बहुत कुछ कम हो गया। उनके सन्देह भी जाते रहे। ये पाँच वर्ष कमला एकान्तवासिनी ही रही।

नेहरू का मन उन दिनों उस वातावरण को, आनन्द भवन को, नववधू को छोड़कर, कल्पना लोक में विचर रहा था। इसके लिए वे बाद में शायद बड़े पछताये। कमला की मृत्यु के बाद यह एक महान दुःख में परिवर्तित हो गया।

दोनों गुसैल थे। प्रारम्भिक दिनों में छोटी छोटी बात पर वे झगड़ा करते थे। दोनों भिन्न भिन्न वातावरणों में पले थे। दोनों की शिक्षा आदि में, भी कोई समानता न थी। इसलिए वे एक दूसरे को समझ न पाये थे। जवाहर खिझा करते थे कि कमला राजनैतिक बातों को तो अलग, सामने गुजरनेवाली घटनायें भी नहीं समझ पाती थीं। उनका उद्देश्य उनका राजनैतिक संधिनी होना ही था। यह जवाहरलाल कुछ दिन तक अनुमान न कर सके।

दुर्भाग्यवश वे बीमार पड़ गईं और उनका यह उद्देश्य पूरा न हुआ। वे कितनी ही निराश हुई होंगी। टैगोर के नाटक में चित्रा यूँ कहती है—"मेरी देवी की तरह स्तुति न करो। कीड़े की तरह थोड़ी देर दया करके एक तरफ़ फेंक भी मत दो। खतरे से भरे मार्ग में अपने साथ ले जाकर उच्च कार्यों में मुझे भी भाग लेने दो। तब तुम मुझे ठीक तरह

समझ पाओगे।" उनकी पत्नी इस चित्रा की तरह थी, यह जवाहरलाल नेहरू १९३० के प्रारम्भ में समझ सके।

उनके विवाह के २१ वें मास में १९१७ नवम्बर में उनकी एक मात्र सन्तान प्रियदर्शिनी इन्दिरा (अब इन्दिरा गान्धी) पैदा हुईं। प्रसव के बाद कमला का स्वास्थ्य गिरता गया। एक के बाद एक बीमारी आती गई, आखिर क्षय के कारण उनकी मृत्यु हो गई।

विवाह के कुछ दिनों बाद जवाहरलाल सपरिवार काश्मीर गये और वहाँ ग्रीष्मावकाश बिताया। उन्होंने अपने परिवार को काश्मीर घाटी में छोड़ दिया और एक सम्बन्धी के साथ पर्वतों में घूमते घूमते, लद्दाख रोड़ पर चले गये। वह तिब्बत का रास्ता था, ज्यों ज्यों वे आगे चलते जाते थे, त्यों त्यों रास्ता निर्जन होता जाता था। बर्फीले पहाड़ थे। हिमनदियाँ थीं। जब उन्होंने जोजिला घाटी पार कर ली, तो बताया गया कि आठ मील की दूरी पर अमरनाथ गुफ़ा थी। रास्ते में बर्फीला पर्वत था। परन्तु उन्होंने परवाह नहीं की। एक गड़रिये को लेकर

कुछ आदमियों के साथ, आगे बढ़े। एक दूसरे को रस्सियों से बाँधकर, वे बर्फ पर चढ़ने लगे। कई हिमनदियाँ पार कीं। उतनी ऊँचाई पर हवा बहुत हल्की हो गई थी, कदम उठाकर कदम रखना मुश्किल हो रहा था।

सवेरे चार बजे के निकले लोग, दुपहर बारह बजे एक विस्तृत मैदान में पहुँचे। वह बहुत सुन्दर था। छः मील चौड़े उस मैदान को पार करने के बाद, पहाड़ से उतकर, अमरनाथ की गुफ़ा आती थी, उन्हें यह पहाड़ की चढ़ाई से सरल लगा। परन्तु उस बर्फ के मैदान में दरारें थीं। उन पर ताजी बर्फ थी, ऐसी बर्फ पर ही पैर रखकर जवाहर फिसल गये। वह बड़ा खड्ड था। कमर में बंधी रस्सी के न टूटने के कारण, वे उस आपत्ति से बच सके—नहीं तो उनका ठिकाना मालूम करने के लिए कई दिन लगते। इतना होने पर भी, जवाहर ने आगे जाने की ही जिद पकड़ी। पर ज्यों-ज्यों आगे जाते, त्यों-त्यों दरारें बढ़ती जाती थीं। इसलिए उन सब को निराश होकर, वापिस लौटना पड़ा।

फिर काश्मीर जाने के लिए, मान सरोवर, कैलाश देखने के लिए, जवाहरलाल ने सपने देखे। उसके लिए जो जो वे करना चाहते थे, वे न कर सके। राजनैतिक कार्यों ने उनका जीवन मार्ग ही बदल दिया, उनको भाग्य काश्मीर यात्रा न कराकर, जेल यात्रा पर ले गया। भारत के प्रधान मन्त्री होने के बाद ही, वे काश्मीर जा सके, बर्फीले पहाड़ देख सके ओर लद्दाख भी जा सके।

[११]

[विमला ने जगतसिंह को चिट्ठी में बताया था कि वह कैसे, शूद्र स्त्री के गर्भ से पैदा हुई थी। उसका अभिरामस्वामी से क्या सम्बन्ध था, वीरेन्द्रसिंह ने कैसे उससे शादी करने से इनकार किया था और कैसे मानसिंह ने उसे जबर्दस्ती विवाह करने के लिए बाधित किया था और कैसे इसलिए वीरेन्द्रसिंह, मानसिंह का शत्रु हो गया था—वीरेन्द्रसिंह की पत्नी होकर भी उसे कैसे दासी के रूप में रहना पड़ा था। इस बीच, जगतसिंह दिग्गज द्वारा यह जानकर कि विमला और तिलोत्तमा, नवाब के महल में थीं, बड़ा दुःखी हुआ।]

उस दिन रात को जगतसिंह सो न सका। जो उसकी सर्वस्व थी, वह तिलोत्तमा नवाब के अन्तःपुर में थी, और उसकी रखैल हो गई थी। अब उसके जीते रहने में भी क्या फायदा है? जगतसिंह ने सोचा कि अच्छा होता, यदि तिलोत्तमा मर जाती।

इस तरह सोचते सोचते न मालूम उसने कब आँखें मूँद लीं। अगले दिन सवेरे उस्मानखान ने उसे उठाया, उसके हाथ में एक पत्र रखा, और कहा—"राजकुमार! मैंने इस चिट्ठी को लिखनेवाली को वचन दिया है कि मैं इसे आप तक पहुँचा दूँगा। इसे फुरसत से पढ़ना।

श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय

तीसरे पहर मैं फिर आऊँगा, यदि इसका कोई जवाब हो, तो मैं उस तक पहुँचा दूँगा।" वह यह कह चला गया।

जब उसकी चिन्ता कम हुई, तो जगतसिंह ने उस पत्र को शुरु से अन्त तक पढ़ा। उसे विमला ने लिखा था। पूरा पत्र पढ़कर, उसने उसे जला दिया। पत्र तो जलकर राख हो गया, पर पत्र में जो चिन्तायें भभक रही थीं, वे राख होती नहीं मालूम होती थीं।

जैसा उसने कहा था, उस्मानखान जगतसिंह के पास गया। "क्या इस पत्र का कोई उत्तर देंगे?" उसने पूछा। जगतसिंह ने उस्मानखान के हाथ में एक पत्र दिया, जो उसने पहिले ही लिख लिया था।

उस्मान ने जब पत्र खोलकर पढ़ा, तो उसमें दो ही दो पंक्तियाँ थीं। "अभागिनी! जो भला तुमने किया है, उसे कभी न भूलूँगा। यदि तुम सचमुच पतिव्रता हो, तो तुम भी अपने पति के मार्ग पर शीघ्र चली जाओ—जगतसिंह।"

उस्मान ने इन दो पंक्तियों को पढ़कर कहा—"युवराज, तुम्हारा हृदय बड़ा कठोर है।"

युवराज ने पूछा—"पठानों से भी अधिक?"

उस्मान ने कठिन स्वर में पूछा—"शायद इसीलिए ही पठानों ने तुम्हारी सेवा शुश्रुषा में कसर रखी है?"

जगतसिंह ने शर्मिन्दा होकर कहा—नहीं, मैंने तुम्हारी बात नहीं कही है। तुमने बड़े प्रेम से मुझे देखा भाला है। मुझे ठीक किया है। भले ही कैद हो, पर मुझे तुमने प्राण दिये हैं। तुमने अपने जानी दुश्मन का बड़ा उपकार किया।

यदि मैं कैदी हूँ, तो मुझे तुम्हारी दया-वया की ज़रूरत नहीं है। मुझे जंजीरों से बाँधिये। यदि मैं कैदी नहीं हूँ, तो बताइये मुझे क्यों सोने के पिंजड़े में रख रखा है?"

"युवराज! तुम कष्टों को क्यों बुलाते हो? वे तो खुद ब खुद आ जाते हैं।" उस्मान ने कहा।

"गद्दों पर न सोकर, पत्थरों पर सोना राजपूत कष्ट नहीं समझता। यदि मैं कतलूखान से बदला न ले सका, तो मौत की सज़ा भी मुझे कोई कष्ट-सी नहीं लगती।" जगतसिंह ने कहा।

"युवराज, खबरदार, पठान जो कहते हैं, वे करके दिखाते हैं।"

जगतसिंह ने हँसकर कहा—"मुझे डराना आपके बस की बात नहीं है।"

उस्मान को असली बात याद हो आयी। उसने जगतसिंह से कहा—"मैं एक और मुख्य काम पर यहाँ आया हूँ।"

"जगतसिंह ने चकित होकर पूछा—"तो बताइये।"

"जो मैं कह रहा हूँ, वह मैं नवाब की तरफ़ से कह रहा हूँ, यह याद रखना।"

"अच्छा।"
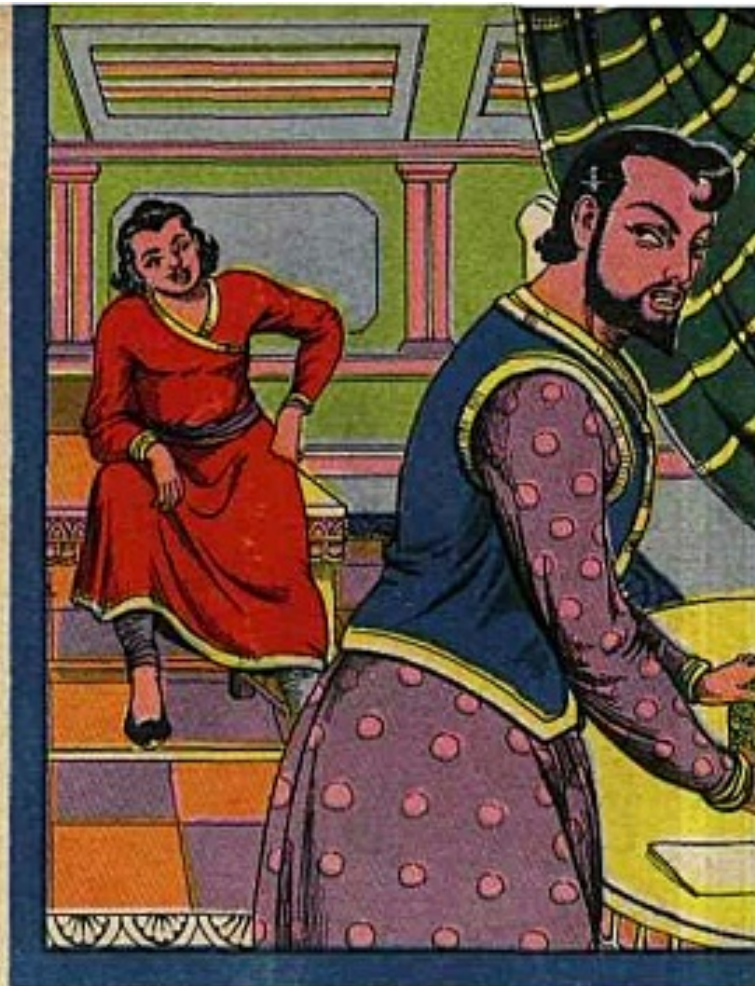
"सुनो, इस युद्ध के कारण, राजपूत और पठान दोनों बर्बाद हो रहे हैं।"

"पठानों को नष्ट करना ही हमारा उद्देश्य है।"

"वह सच है। दोनों तरफ़ के लोग मर रहे हैं, एक तरफ़ के लोग ही मरेंगे, इसके कोई आसार नहीं दिखाई देते। जिन्होंने मन्थारण किला जीता है, क्या वे तुम्हें बिल्कुल कमज़ोर दिखाई पड़ते हैं।"

"नहीं, वे ताकतवर ही हैं।"

"जो भी हो, मेरा मतलब अपनी डींग मारना नहीं है। मुगल बदशाह से हमेशा

के लिए वैर मोल लेकर, पठानों के लिए उड़ीसा में पड़े रहने में, कोई सुख नहीं है। परन्तु बादशाह के लिए उड़ीसा में पठानों को वश में रखना भी आसान काम नहीं है—तुम जानते हो, उड़ीसा, दिल्ली से कितना दूर है। उतनी दूर से बादशाह उड़ीसा का कैसे जीत सकेगा? मान लो, जीत भी लिया, तो बहुत-सी हानि होगी और उड़ीसा भी बादशाह के आधीन न होगा। इस तरह दोनों पक्षों के नष्ट होने में क्या लाभ है, तुम ही सोचो।" उस्मान ने कहा।

"तो क्या किया जाय?" जगतसिंह ने पूछा।

"मैं अपने आप कुछ नहीं कह रहा हूँ। हमारा नवाब सन्धि करना चाहता है।"

"कैसी सन्धि?"

"दोनों पक्षों को कुछ न कुछ कुर्बानी करनी होगी। कतलूखान ने जो कुछ बंगाल में जीता है, वह उसे छोड़ने के लिए तैय्यार है। बादशाह जो कोई सेना भेजें, उसे वापिस भेज दें। यह देखें कि हम पर, वे हमला न करें। इससे हानि पठानों की ही है, बादशाह की नहीं। क्योंकि जो कुछ हमने जीता था, हम उसे दे रहे हैं। अकबर उसी प्रदेश को खोयेगा, जो उसने जीता नहीं है।"

"अच्छा, तो यह सब मुझसे क्यों कह रहे हो? सुलह समझौते करनेवाले राजा मानसिंह हैं, उन्ही के पास दूत भेजिये।"

"दूत भेजे हैं। पर सुना है, उनको किसी ने बताया है कि पठानों ने तुम्हारी हत्या कर दी है। पुत्र के दुःख में तड़प रहे हैं। सुलह की बात सुन ही नहीं रहे हैं। दूत कहेगा भी तो उनको विश्वास नहीं होगा। यदि तुमने जाकर, हमारी तरफ़ से बातचीत की, तो काम हो जायेगा।"

जगतसिंह ने उस्मानखान की ओर मुड़कर कहा—"मेरी लिखावट देखकर, महाराज को विश्वास हो जायेगा। मुझे स्वयं क्यों जाने के लिए कहते हैं?"

"महाराज को यहाँ की वास्तविक स्थिति नहीं मालूम है। यही नहीं, उनको जो सन्तोष तुम्हें देखकर होगा, तुम्हारी चिठ्ठी को देखकर नहीं होगा। पहिले तो तुम्हें छुटकारा मिलेगा। यह सब सोचकर ही नवाब ने यह कदम उठाया है।"

"पिताजी के पास जानें में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

"बहुत अच्छा, यदि सुलह न हुई, तो तुम्हें फिर यहाँ वापिस आना पड़ेगा। यह वचन दो।"

"वचन देकर, मैं निभा सकूँगा—इसका तुम्हें क्या भरोसा है?"

उस्मान ने हँसकर कहा—"हर कोई जानता है कि राजपूत वचन देकर, मुकरते नहीं है।"

"पिताजी से मिलकर, यथाशीघ्र वापिस आऊँगा। यह मैं वचन दे रहा हूँ।"

"यह भी वचन दो, जो सन्धि की शर्तें हम रख रहे हैं, उनको महाराज द्वारा स्वीकार कराने के लिए यथाशक्ति प्रयत्न करोगे। यह भी वचन दो।"

"यह वचन मैं नहीं दे सकता। पठानों को हराकर, विजय पाने के लिए बादशाह ने हमें भेजा है। पठानों से सन्धि करने के लिए बादशाह ने हमें नहीं भेजा है। सन्धि करने के लिए या न करने के लिए हमें कोई हक नहीं है।"

उस्मानखान के मुँह पर सन्तोष और दुःख दोनों झलकने लगे। उसने जगतसिंह से कहा—"युवराज, तुमने सचमुच राजपूतों

की तरह बात की। पर सोचो, तुम्हें अपने छुटकारे के लिए इससे अच्छा रास्ता न मिलेगा।"

"यदि मैं न छूटा, तो क्या बादशाह को इसकी चिन्ता है? कितने ही और हैं, मेरी तरह राजपूत।"

उस्मान ने जगतसिंह को तरह तरह से मनाया। परन्तु जगतसिंह ने, जैसा उसने चाहा था, वैसा वचन न दिया।

"जो कुछ मैंने कहा है, यदि तुमने न किया, तो न मालूम नवाब क्या करें?" उस्मान ने कहा।

"मैंने तो पहिले ही कहा है कि मुझे कैद में डाल दो।" जगतसिंह ने कहा।

"क्या भरोसा कि नवाब इससे तसल्ली कर लेगा।"

"जैसा वीरेन्द्रसिंह को मरवाया है, वैसे मुझे भी मरवा सकता है। इससे अधिक और क्या कर सकता है?" युवराज ने कहा। उसकी आँखें अंगारे हो रही थीं।

उस्मान ने दुःखी स्वर में कहा—"तो मैं फिर इजाज़त चाहता हूँ।" वह यह कहकर चला गया।

इसके कुछ देर बाद, जगतसिंह के पास एक सेनाधिकारी आया। उसके साथ, चार और तलवारें लिये सैनिक थे। उनको देखकर, जगतसिंह ने पूछा—"तुम किस काम पर आये हो?"

"आपको एक और जगह ले जाने के लिए।" उन्होंने जवाब दिया।

"मैं तैय्यार हूँ। चलो।" कहकर, जगतसिंह उनके साथ चल पड़ा।

उस दिन नवाब का जन्मोत्सव था। सवेरे से जहाँ देखो, वहाँ शोर शराबा हो रहा था। कहीं गाना, तो कहीं नाच, तो पीना पिलाना, कहीं दान, दक्षिणा का

वितरण, कहीं भोजन दान, कहीं बातों में सारा दिन गुज़र गया और रात आयी।

विमला ने सारा महल छान डाला। जैसे भी हो वह तिलोत्तमा के कमरे में पहुँची। उसके "मैं आयी हूँ...." कहते ही तिलोत्तमा चौंककर बैठ गई। तिलोत्तमा बिना देखे, कुछ कहे उसकी ओर घूरती जाती थी।

"आने के लिए कह गई थी, आयी हूँ। क्यों नहीं बात करती हो?"

"क्या बताऊँ? बात बात सब खतम हो गई।" तिलोत्तमा ने कहा। उसकी आवाज़ से जाना जा सकता था कि वह उससे पहिले रो रही थी।

"इस तरह दिन रात रोते रोते कितने दिन जिओगी?" विमला ने कहा।

"नहीं जीऊँगी, तो क्या हो गया? जितनी जल्दी चला जाऊँ, उतना ही अच्छा। इतने दिन क्यों जियी, इसका ही मुझे अफसोस है।" तिलोत्तमा ने कहा।

विमला के भी आँसू बहने लगे, उसने आँखें पूँछकर, लम्बी साँस लेकर, कहा— "एक तो फ़ुरसत नहीं, फिर यह सोचकर कि हम भी कुछ निश्चिन्त हो जायें। कतलूख़ान ने हमारी ओर न देखा, अगर आज हम न दिखाई दीं, तो न मालूम वह क्या करे?" उसने कहा।

"यदि और कोई रास्ता न हो, तो मर सकतीं हूँ।" तिलोत्तमा ने काँपते हुए कहा।

"इस तरह निराश हो जाने से कोई फायदा नहीं है। थोड़ा धीरज रखो। यहाँ से बचकर, निकल भागने का तरीका मैं जानती हूँ।" कहकर, विमला ने अपनी पोषाक में से चमचमाती तलवार निकाली और उस्मान की दी हुई अंगूठी बाहर निकाली।

"यह तलवार कहाँ से मिली?"

"कल, अस्मानी को देखा था न? अभिरामस्वामी ने उसके द्वारा यह तलवार भिजवायी है।"

"और यह अंगूठी?"

"मेरे भाग जाने के लिए उस्मानखान ने यह अंगूठी दी है।"

तिलोत्तमा स्तब्ध हो गई। उसका दिल धड़-धड़ करने लगा।

"ये पुराने कपड़े, अच्छे कपड़े पहिन कर, वहाँ जाओ जहाँ नाच, गाना हो रहा है।" विमला ने कहा।

"ऊँ हूँ...." तिलोत्तमा ने कहा।

"नहीं, तो तुम बाहर नहीं जा सकती।"

तिलोत्तमा रोने लगी।

"धीरज धरकर, जो कुछ मैं कहूँ, वह करो। तुम्हारी रक्षा के लिए मैंने एक और उपाय सोचा है।" विमला ने सोचा।

"यह अंगूठी लेकर, अपने पास रखो। तुम्हारे लिए विनोद स्थल जाने की ज़रूरत नहीं है। आधी रात मनोरंजन होता रहा। आधी रात के समय अंगूठी लेकर, अन्त:पुर के द्वार पर आयी। वहाँ, तुम्हें एक सिपाही दिखाई देगा। यदि वह तुम्हें कोई अंगूठी दिखाये, तो तुम यह अंगूठी दिखाना। तब वह तुम्हें अभिरामस्वामी के पास ले जायेगा। नहीं तो, तुम जहाँ चाहो, वह ले जायेगा। तुम निर्भय हो उसके साथ जा सकती हो, यदि रास्ते में तुम्हें कोई रोके, तो यह अंगूठी दिखाना। तब तुम्हें कोई न रोकेगा, समझी?" विमला ने कहा। यह कहकर विमला चली गयी।

[अभी है]

मित्र का धोखा

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव को उतारकर, हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, तुम किसके लिए इतने कष्ट उठा रहे हो, मैं नहीं जानता। परन्तु मार्गसिंह की तरह ठगे न जाना। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं तुम्हें मार्गसिंह की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" वह यों सुनाने लगा।

चतुरगिरि राजा का, चित्रसेन नाम का एक लड़का हुआ रहता था। चित्रसेन की छुटपन में ही एक शिकारी के लड़के से दोस्ती हो गई। उसका नाम मार्गसिंह था। दोनों एक ही उम्र के थे। दोनों साथ साथ घूमा फिरा करते। सयाने होने पर, राजा ने चित्रसेन का राज्याभिषेक किया और स्वयं उसने वानप्रस्थ ले लिया।

बेताल कथाएँ

राजा होते ही, चित्रसेन का जीवन बिल्कुल बदल गया। अब उसे मार्गसिंह जैसों के सहवास की ज़रूरत न थी। परन्तु मार्गसिंह ने अपने पुराने साथी को नहीं छोड़ा। उसने सोचा, चूँकि उसका बचपन का मित्र, अब राजा बन गया था, उसको कोई कमी न रहेगी। इस भरोसे ही उसने अपने जीवन को सुधारा नहीं। अपनी वंशीय वृत्ति में उसने कोई प्रवीणता नहीं पायी। जो कुछ उसके पिताने कमाया वमाया था, उसे खर्च खर्चाकर, वह पूरा कंगाल हो गया था।

जब गुजारा मुश्किल हो गया, तो मार्गसिंह राजा की सहायता माँगने के लिए, राजदरबार में जाकर प्रतीक्षा करने लगा। थोड़ी देर बाद, राजा दरबार में आया। उसने मार्गसिंह को देखा। पर इस तरह चला गया, जैसे उसे देखा ही न हो। जब उसने दो तीन दिन, उसको पहिचाना तक नहीं, तो मार्गसिंह को बड़ी निराशा हुई। वह जान गया कि बचपन की मैत्री से उसे कोई फ़ायदा होनेवाला नहीं था। कुल के और लोगों ने मार्गसिंह के पास आकर कहा—"अरे शिकारी पर भूख के मारे मरने की क्यों नौबत आये? आज हम सब लोग शिकार पर जा रहे हैं। हमारे साथ जंगल आओ।" मार्गसिंह अपने पिता के हथियार लेकर, शिकार के लिए निकल पड़ा।

जंगल में, औरों ने तरह तरह के जानवर पकड़े। मार्गसिंह को एक छोटा, खरगोश भी न मिला। वह शिकार बिल्कुल नहीं जानता था। शाम, जब सब अपना अपना शिकार लेकर, घर की ओर निकले, तो मार्गसिंह उनके साथ जाने के लिए शर्माया। वह अकेला, एक पगडँडी से, घर की ओर चल दिया।

कुछ दूर जाने पर मार्गसिंह को एक गुफा दिखाई दी। जब उसने गुफा में झाँककर देखा, तो उसको एक सुन्दर स्त्री बैठी दिखाई दी। उसकी गोदी में सिर रखकर, एक मुनि सो रहा था। उस जगह एक इतनी सुन्दर स्त्री को देखकर, मार्गसिंह चकित रह गया और वहीं खड़े होकर, वह उसकी ओर लगातार देखता रहा। यह देखकर स्त्री ने उसे ईशारा किया, यदि मुनि जाग गया, तो आफत आ पड़ेगी, उसे जाने के लिए कहा। मार्गसिंह डर कर वहाँ से चल दिया। सोचने लगा कि इतनी सुन्दर स्त्री यदि मित्रसेन की पत्नी हो, तो क्या अच्छा हो। यदि इसके बारे में, उसको बताया गया, तो पहिले का स्नेह फिर पक्का हो जायेगा और हमेशा के लिए चैन की बंसी बजेगी।

वह सीधे राजमहल की ओर गया। उसने सैनिकों द्वारा अपना परिचय देकर, राजा के पास खबर भिजवायी कि वह बहुत ज़रूरी बात बताने आया था, तुरत राजा ने उसको बुलवाया।

मार्गसिंह को देखकर राजा ने कहा—"हमें मिले हुए बहुत दिन हो गये हैं।
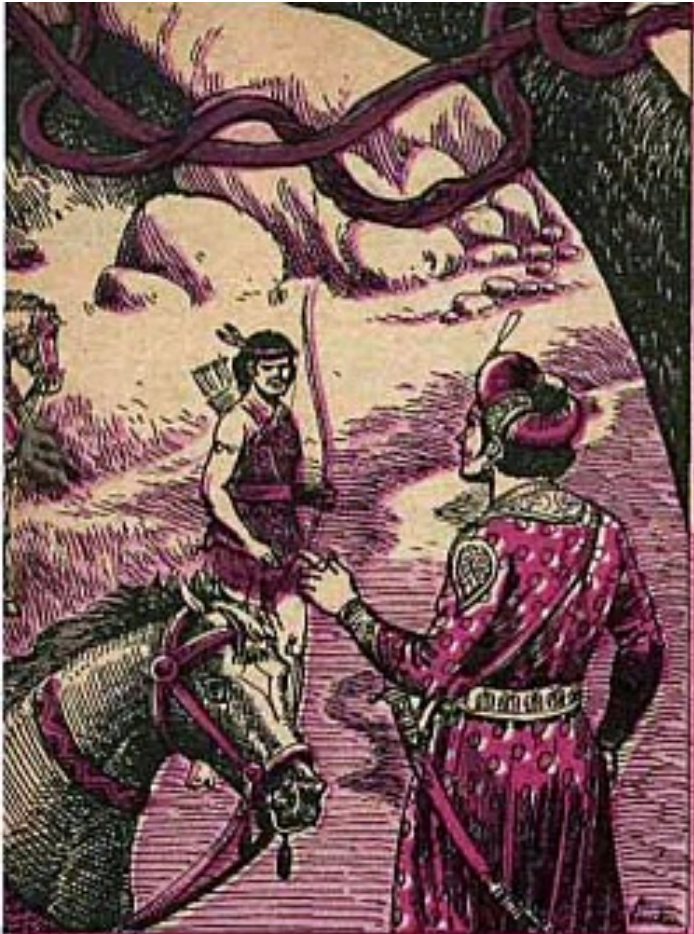
तुम यह न सोचना कि मैं तुम्हें भूल गया हूँ। परन्तु राज्य करना एक पिंजड़े में रहने के बराबर है। जो स्वतन्त्रता पहिले मुझे थी, अब नहीं है। फिर भी तुम क्या बताना चाहते हो?"

"जंगल में, एक गुफा में, मैंने एक बहुत ही सुन्दर स्त्री देखी है। उसे अप्सरा ही कहा जा सकता है। साधारण स्त्री नहीं। उसके पास एक मुनि है। उस जैसी स्त्री को, इस तरह के अन्तःपुर में रहना चाहिए, न कि मुनि के पास गुफा में। मुनि सो रहा है। यदि तुम उसे उठाकर लाना चाहते हो, तो यह ही अच्छा समय है।" मार्गसिंह ने कहा।

चित्रसेन ने उस स्त्री को लाने की ठानी। उसने तुरत अच्छे कपड़े पहने। दो घोड़े मँगवाये। एक पर स्वयं सवार हुआ। दूसरे पर मार्गसिंह को सवार होने के लिए कह—मार्गसिंह के पीछे पीछे वह गुफा के ईलाके में गया।

गुफा से कुछ दूरी पर, दोनों घोड़ों पर से उतरे।

चित्रसेन ने अपने मित्र से कहा—"तुम गुफा में झाँककर देखो कि मुनि सो रहा है कि नहीं? अगर सो रहा हो, तो उसके सिर को अपनी गोदी में रखकर उस स्त्री को मेरे पास भेज देना। फिर मैं आऊँगा, मुनि को मारकर, तुम्हें छुड़ा दूँगा।"

मार्गसिंह गुफा में बिल्ली की तरह घुसा। मुनि तब भी उस स्त्री की गोदी में सिर रखकर सो रहा था। मार्गसिंह ने उस स्त्री के पास जाकर कान में कहा—"तुम्हें, इस मुनि से छुड़ाने के लिए राजा चित्रसेन आये हैं। वह बड़ा सुन्दर है। तुम मुनि का सिर मेरी गोदी में रखकर, महाराजा से जाकर मिलो।"

तुरत उस स्त्री ने बड़े उत्साह से मुनि के सिर को होशियारी से, मार्गसिंह की गोद में रखा और इस तरह उठकर चली गई, जैसे पिंजड़े में से पक्षी उड़ गया हो। चित्रसेन उसका सौन्दर्य देखकर चकित हो गया। वह उसकी कल्पना से भी अत्यन्त सुन्दर थी। वह उसे अपने घोड़े पर सवार करके अपने नगर ले गया।

मार्गसिंह बहुत देर तक प्रतीक्षा करता रहा कि राजा आयेगा और उसे छुड़ायेगा। पर अन्त में उसको विश्वास हो गया कि उसको, उसके बचपन के मित्र ने धोखा दे दिया था। यह सोच उसकी आँखों में तरी भी आ गई। उसके आँसू मुनि पर गिरे और वह उठा। स्त्री की जगह आदमी को देख, मुनि ने पूछा—"कौन हो तुम? उस स्त्री का क्या हुआ?"

मार्गसिंह को ऐसा लगा, जैसे वह रंगे हाथ पकड़ा गया हो, उसने जो कुछ गुजरा था, कह सुनाया, सब सुनकर मुनि ने शाप दिया—"पापी, दुष्ट कहीं का, तुमने यह काम किया है, इसलिए तुरत मर जाओ।" तुरत मार्गसिंह मर गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा मुझे एक सन्देह है। मुनि ने उस मित्रद्रोही चित्रसेन को क्यों नहीं शाप दिया, जो उस स्त्री को उठा ले गया था? या उस स्त्री को, जो एक सुन्दर आदमी के आने की खबर पाते ही, चली गई थी, क्यों नहीं शाप दिया? उस विचारे, हताश मार्गसिंह को उसने क्यों शाप दिया? जो कुछ जैसा था उसे बताने के लिए ही उसे कम से कम उस पर तरस खाना था। यदि तुमने इन प्रश्नों का जानबूझ कर उत्तर न दिया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"राजा कृतघ्न है। परन्तु संसार में दुष्टों को सज़ा देना मुनि का काम नहीं है। सुन्दर स्त्रियों को जमा करना, राजा के लिए स्वाभाविक है। इसलिए मुनि ने राजा को शाप नहीं दिया। उस स्त्री के सौन्दर्य से हमें कोई मतलब नहीं है। यदि वह उसकी सेवा शुश्रुषा न करना चाहती थी और अन्तःपुर में रहना चाहती थी, तो यह उसका दुर्भाग्य था। इसके लिए उसको सज़ा देना बेकार है। परन्तु मार्गसिंह ने बड़े की दोस्ती के लिए गन्दा काम किया। आगे आगे और भी गन्दे काम करता। यही नहीं, वह पहिले मुर्दा-सा हो गया था। वह चूँकि और तरह जी नहीं पाया था, इसलिए मृगमरीचिका-सी, राजा की सहायता की अपेक्षा करने लगा था। इसलिए मृत्यु उसके लिए दण्ड नहीं, विमुक्ति थी।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

(जी. संजीवरेड्डी की कहानी के आधार पर)
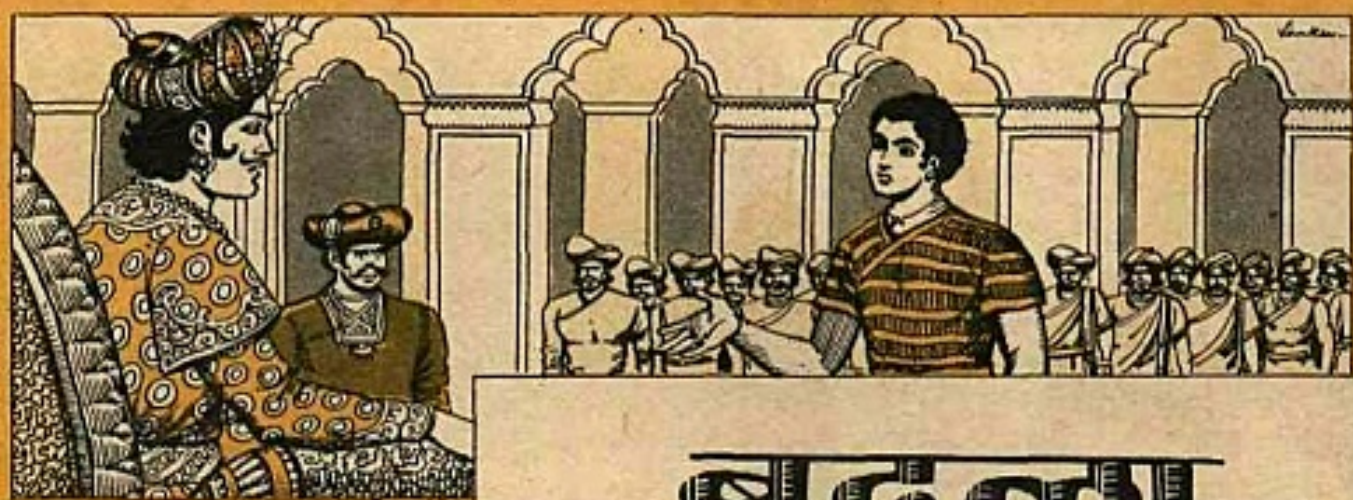
बदला

मलय के आसपास मारुदेव नाम का जादूगर था। वह बहुत-से मन्त्र जानता था, पर वह कमाई के लिए उनका उपयोग नहीं करता था। हमेशा वह गरीब ही रहा। उसका लव नाम का लड़का था। पिता ने उसको हर विद्या सिखाई।

लव अपनी विद्या का धन और कीर्ति के लिए उपयोग करना चाहता था। इसलिए वह अपना गाँव छोड़कर, देश-विदेश में घूमने निकल पड़ा। कई राजाओं ने उसके जादू को देखकर, उसे बहुत-से ईनाम दिये। इस तरह घूमता-घामता, तोरण देश गया। वहाँ के राजा के पास जाकर कहा कि यदि अनुमति हुई, तो मैं जादू का प्रदर्शन करूँगा।

तोरण देश के राजा के बहुत दिनों बाद, एक लड़का पैदा हुआ था। उसकी जन्मकुण्डली देखकर, ज्योतिषियों ने बताया था कि जब वह दो वर्ष का होगा, एक जादूगर आयेगा और उसके कारण, उसका हीन योग आयेगा। तब से राजा, जादू और जादूगर के नाम से पसीना पसीना हो जाता था। अब लव ने जाकर जब कहा कि वह जादूगर था, राजा घबरा गया। उसका लड़का दो वर्ष का हो गया था। इसके कारण, ज़रूर मेरे लड़के को कोई न कोई हानि होगी।

राजा ने यह सोचकर, मन्त्री से कहा—"जैसे भी हो, इस जादूगर को भेज दो।" मन्त्री ने लव को एकान्त में बुलाकर, कहा—"जादू का, महाराजा को बहुत शौक है। इसलिए तुम्हारे आतिथ्य की विशेष व्यवस्था करने के लिए राजा ने

ओंप्रकाश

कहा है। आज राजा के अतिथि गृह में आतिथ्य स्वीकार करो। कल तुम्हारे प्रदर्शन का इन्तज़ाम कर दूँगा।"

लव बड़ा खुश हुआ। उस दिन रात को मन्त्री ने उसको विष से भरा अन्न खिला दिया। सवेरे होते होते, नौकरों द्वारा उसका शव गड़वा भी दिया गया।
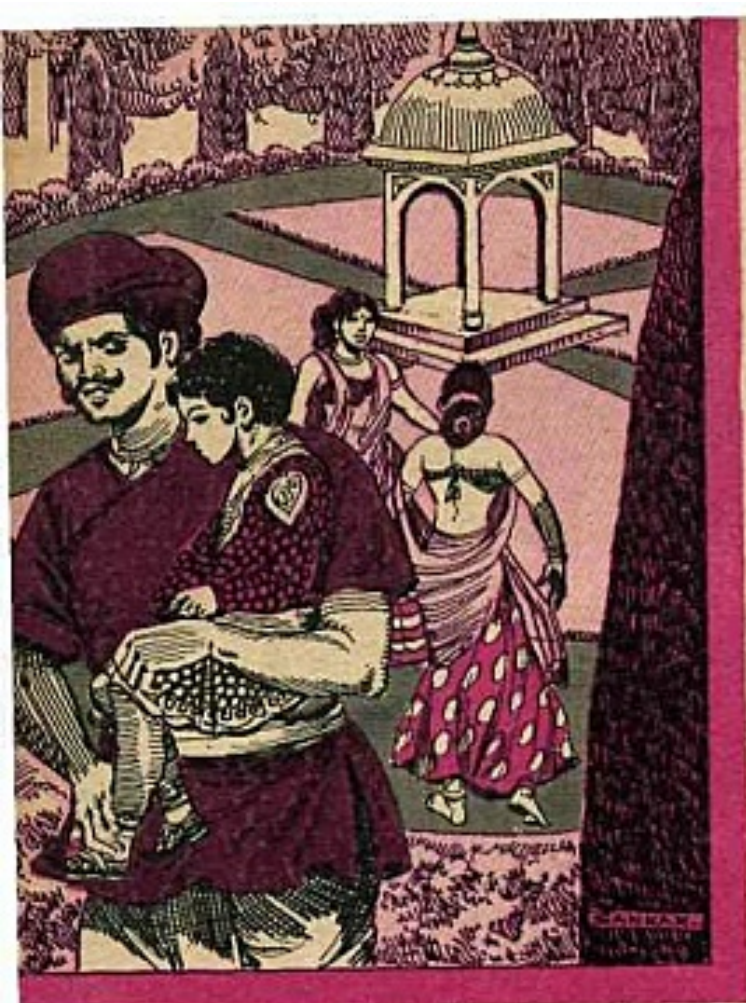
भले ही यह सब चुपचाप कर दिया गया हो, पर शहर-भर में यह खबर फैल गई। कुछ दिनों बाद, यह खबर मारुदेव के पास गई। यह जानने के लिए कि यह बात सच थी कि नहीं, वह स्वयं निकला। वह भी उसी रास्ते, अपना जादू दिखाता गया, जिस रास्ते लव गया था। वह भी तोरण देश पहुँचा। कई जानते थे कि लव तोरण आया था। पर वह कहाँ से आया था और कहाँ था, कोई नहीं जानता था। पर नगर में उसने यह भी सुना कि लव को राजमहल में अतिथि बनाकर, मार दिया गया था।

मारुदेव स्वयं अच्छा आदमी था। परन्तु यह जानकर बिना किसी कारण, राजा ने उसके लड़के को मरवा दिया था, उसने बदला लेने की ठानी। वह राजमहल के आसपास ही घूमने लगा। जब दासी, राजकुमार को घुमाने के लिए आयी उसने अपनी विद्या से दासी को मूर्छित कर दिया और राजकुमार को उठाकर अपने देश ले गया। घर पहुँचकर, उसने राजकुमार के वस्त्र, आभूषण निकालकर, एक सन्दूक में रखे और उस लड़के को अपने लड़के की तरह पालने पोसने लगा।

तोरण राजा को जब मालूम हुआ कि उसके लड़को को कोई उठा ले गया था, तो वह दुखी हो उठा। जो कुछ सावधानी उसने बरती थी, वह सब व्यर्थ गई और

उसका इकलौता लड़का कहीं चला गया था। लड़के के लिए विलखते राजा से मन्त्री ने कहा—"महाराज, शोक न कीजिये। जो कुछ भाग्य में लिखा था, वह हुआ। जो लड़के को उठा ले गया है, वह ज़रूर जादूगर होगा। जिस लड़के को हमने मरवाया है, हो सकता है, उसका पिता ही हो, या कोई और सम्बन्धी। लगता है, हम खुद ही यह आपत्ति मोल ले बैठे हैं। मगर हमारे ज्योतिषियों ने बताया है कि लड़के को प्राण हानि न होगी। अच्छे समय आने पर, कुछ दिनों बाद वह स्वयं आ जायेगा।"

लव की जब हत्या की गई थी, तब उसकी उम्र कोई सोलह साल की थी। मारुदेव ने राजकुमार को सोलह वर्ष तक पाला पोसा, फिर अपना बदला लेने की सोचने लगा। वह उसको लेकर, तोरण देश आया। उसने राजकुमार से कहा—"बेटा, तुम यह सन्दूक लेकर, राजा के दर्शन करो। जब तुम बच्चे थे, तब तुम्हारे बड़े भाई ने इस तोरण राजा के यहाँ आतिथ्य पाया था, राजा ने उसको जो ईनाम दिये थे, उसके बदले यह सन्दूक लाये हो, यह कहकर, राजा को सन्दूक दे देना।"

राजकुमार ने पूछा—"क्या कोई मेरा भाई था? क्यों नहीं पहिले बताया?"

"पहिले, जो मैंने कहा है, वह करो। फिर तुम स्वयं अपने भाई के बारे में जान पाओगे। उसे तुम देखोगे भी।" मारुदेव ने कहा।

राजकुमार सन्दूक लेकर, महल में राजा के दर्शन के लिए गया। उसने राजा को नमस्कार करके कहा—"महाराज, मैं मारुदेव नाम के जादूगर का लड़का हूँ।

बहुत साल पहिले जब मेरा भाई जादू के प्रदर्शन के लिए आया था, तब आपने उसका अतिथि सत्कार किया था और उपहार दिये थे। उनके बदले, मेरे पिता ने आपको यह सन्दूक देने के लिए कहा है।" उसने यह कहकर, सन्दूक राजा के सामने रखा। राजा ने सन्दूक खोलकर जो देखा, तो पाया कि जब उसका लड़का खो गया था, तब उसने जो कपड़े और गहने पहिन रखे थे, वे ही उसमें थे।

दुःख और क्रोध के कारण, उसकी अक़्ल जाती रही। उसने गुस्से में अपने लड़के को मारने की कोशिश की। मन्त्री ने उसे रोकते हुए कहा—"जल्दी न कीजिये। यह बात सच है कि ये राजकुमार के कपड़े हैं। पर यदि उसने राजकुमार को मार दिया होता, तो तभी इन्हें भेज देता। इस लड़के की उम्र भी, राजकुमार के उम्र जितनी ही लगती है।"

मन्त्री ने राजा के सामने रखे सन्दूक में से, एक एक निकालकर देखा, तो तह में एक चीट रखी हुई थी। उस पर यह लिखा हुआ था—"राजा, तुमने अपने लड़के की ही हत्या की। मेरे लड़के को मरवाने का, मैंने यूँ बदला लिया है।"

यह चीट देखकर, राजा पहिले तो घबराया। यदि मन्त्री न रोकता, तो जैसा जादूगर ने सोचा था, वह अपने लड़के को मार देता। राजा अपनी मूर्खता पर पछताया। उसने अपने लड़के का आलिंगन किया। उसने जादूगर को बुलवाया और उससे माफ़ी माँगी कि बिना कारण ही उसके लड़के को मरवा दिया था। उसे उसने एक जागीर ईनाम में दी।

मन्त्री की चाल

मणिपुर के राजा ने अपनी लड़की को, उसके जन्म दिन पर, एक नवरत्न हार दिया। वह निपुणों द्वारा बनाया गया था। उसमें सैकड़ों मणि-मोती थे। बहुत मूल्य था। वह हार, एक दिन रात को चोरी चला गया।

अन्तःपुर में सोनेवाली लड़की के गले में से, बाहर का आदमी, हार निकालकर नहीं ले जा सकता था। राजमहल के आदमियों में से किसी ने चुराया होगा।

यदि एक एक को बुलाकर पूछा गया, तो सचाई नहीं मालूम होगी। यदि हर किसी को बुलाकर पूछा गया—"तुम्हीं ने चोरी की है।" तो यह प्रश्न करनेवाले की बेअक्ली ही साबित करेगा। इसलिए मन्त्री ने चोर को पकड़ने के लिए एक बात सोची। उसने दुपहर से पहिले अपने तीन आदमियों को क्या करना था, यह अच्छी तरह समझा बुझा दिया।

दुपहर के बाद, उसने सबको राजा के मण्डप में इकठ्ठा किया और कहा—"रात में किसी ने राजकुमारी के गले से हार चुरा लिया। जिसने चोरी की है, यदि उसने तुरत आकर हार दे दिया, तो इस बार उसे माफ़ कर देंगे। नहीं दिया, तो उनको कड़ी सज़ा भुगतनी पड़ेगी। यह पहिले ही बताये देता हूँ।" किसी ने कुछ नहीं कहा।

इस बीच उस प्रान्त में, एक भूत वैद्य-सा मान्त्रिक घूमता घूमता आया।

"मेहरबानी कीजिये। आपकी मन्त्र शक्ति की आवश्यकता मालूम होती है।"

कहकर, मन्त्री से उस भूत वैद्य को राजमण्डप में बुलवाया।

उसी समय व्यापारी के वेष में एक व्यक्ति ने भागकर, आते हुए कहा—"महामन्त्री! रक्षा कीजिये। कल हमारे घर चोर आये और दस हज़ार रुपये की चीज़ें उठाकर ले गये।" वह मन्त्री के पैरों पड़ा।

मन्त्री ने तुरत भूत वैद्य की ओर मुड़कर कहा—"स्वामी, पहिले जिस चोर ने इसके घर में चोरी की है, उसका पता लगाइये। इस घर के चोर के बारे में बाद में मालूम किया जा सकता है।"

भूत वैद्य ने अपने कमण्डल में से थोड़ा जल लेकर, "हाँ, हूँ...." करते कुछ मन्त्र पढ़े और उस जल को वहाँ इकट्ठा हुए लोगों पर छिड़क दिया। उनमें से एक ज़ोर से चिल्लाता, तड़पने और छटपटाने लगा। वह दर्द में कराहने लगा—"मुझे न मारिये। मैंने ही चोरी की है। मैं पैसा दे दूँगा।"

"उसे यूँहि छटपटाने दीजिये। लगे हाथ यह भी मालूम कीजिये कि किसने नवरत्न हार लिया है?" मन्त्री ने पूछा।

तुरत एक दासी सामने आयी। उसने मन्त्री के पैरों पड़कर कहा—"माफ़ कीजिये। मैंने ही लालच में हार चुराया था। मेरी रक्षा कीजिये।"

तुरत नीचे गिरा, कराहता आदमी हँसता हँसता बैठ गया। भूत वैद्य और व्यापारी ने भी अपना वेष हटा दिया।

वे तीनों मन्त्री के आदमी ही थे। उनके नाटक के कारण ही, चोरी गया नवरत्न हार मिल गया।

करोड़पति

काँची में एक वैश्य रहा करता था। उसने व्यापार में करोड़ों रुपया बनाया। वह नया कुबेर कहलाया जाने लगा। उसके बहुत-से लड़के और लड़कियाँ थीं। उसने दामादों को भी अपने घर ही रखा। उनको भी काम दिखाया। इस तरह उसने अपना व्यापार और बढ़ा लिया। बन्धु-बान्धवो के बीच वह वैभव से रहने लगा।

परन्तु यह कुबेर घर से बाहर बड़ा लोभी था। उसने दान धर्म के लिए या मन्दिरों के लिए या देवी देवताओं के लिए कभी कानी कौड़ी भी न खर्ची थी।

एक दिन एक बैरागी, कुबेर के घर के सामने आया। उसने कहा कि उसे एक समय का भोजन दिया जाय।

"अरे, जा बे चोर, तू कहाँ से यहाँ आ मरा है।" कुबेर झुँझलाया।

"यदि मैं चोर ही होता, तो भला मैं भीख क्यों माँगता?" बैरागी ने पूछा।

दोनों में थोड़ी देर तक यूँ बातें होती रहीं। फिर कुबेर ने यह सोचकर कि वह उसका समय व्यर्थ कर रहा था, उसको नौकरों से बाहर भिजवा दिया। बाहर भेजे जाने पर भी, उस बैरागी ने जिद पकड़ी, जब तक उसको खाने-पीने का कच्चा माल न दिया गया, तो वह नहीं जायेगा। वह शाम तक घर के सामने बैठा रहा।

"चाहे तुम यहाँ मर जाओ, तब भी मैं कुछ नहीं दूँगा। चाहे, जितनी देर बैठो।" कुबेर ने कहा। बैरागी तीन दिन, तीन रात, वहीं घर के सामने बैठा

लक्ष्मीनारायण

रहा। कुबेर से उसके सम्बन्धियों ने कहा कि कहीं, वह बैरागी शाप न दे दें। परन्तु वह डरा नहीं। उसने घर का दरवाज़ा बन्द करवा दिया। वह एक और दरवाज़े से आने जाने लगा। कुछ दिनों बाद उसने देखा कि बैरागी कहीं चला गया था। कुबेर को ऐसा लगा, जैसे उसने कोई बड़ा मैदान मार लिया हो। पर जब उसने दरवाज़ा खुलवाया, तो बैरागी फिर आ गया।

"यह बैरागी मेरे पीछे शनि की तरह लगा हुआ है, मालूम करो कि क्यों आया है।" कुबेर ने एक आदमी को भेजा।
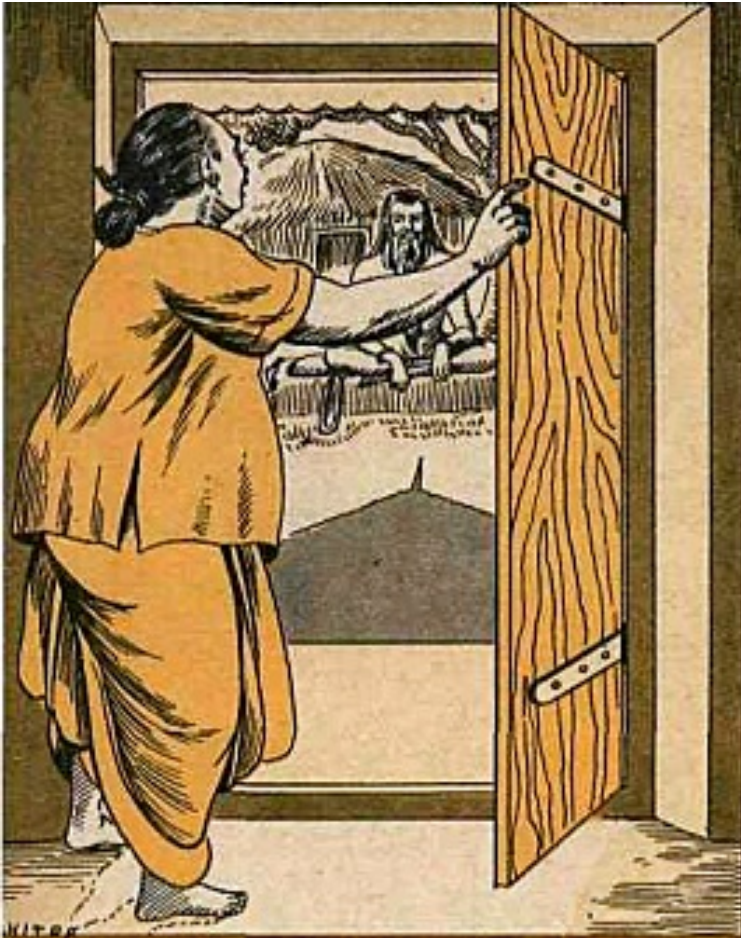
"मैं तुमसे कुछ माँगने नहीं आया हूँ। तुमसे कुछ बात करनी है।" बैरागी ने कुबेर के पास खबर भिजवायी।

कुबेर ने कहला भेजा कि छः महीने तक उससे मिलने के लिए उसके पास समय न था। बैरागी चला गया और ठीक छः महीने बाद आया। कुबेर फिर उसको टालता गया। बैरागी, जब कभी उसे बुलाता, वह आता—इस तरह एक साल बीत गया। यह सोच कि बैरागी की बात उसे सुननी ही पड़ेगी। उसने आखिर उसको बुलवाया।

"मैं एक साल से देख रहा हूँ। माया के कारण, इन पत्नी, पुत्रों और बन्धुओं के कारण, तेरी आँखों में अन्धेरा आ गया है, आँखें खोलकर सचाई देखो।" बैरागी ने कहा।

"आत्मीयों को त्यागने का उपदेश देने के लिए ही क्या मेरे पास इतने दिनों से आ रहे हो?" कुबेर ने पूछा।

"इनमें सचमुच तुम्हारा एक भी नहीं है। जब तक तुम कमा रहे हो, तब तक ही ये तुम्हारे साथ हैं। उसके बाद तुम जिन्दे हो या मर गये हो, यह भी कोई

न देखेगा। अगर चाहो, तो मैं यह बात सिद्ध करके दिखाऊँगा।" बैरागी ने कहा।

इसके लिए वैश्य भी मान गया और एक उपाय बताकर चला गया।

इसके कुछ दिनों बाद कुबेर ने यूँ दिखाया, जैसे उसको कोई बीमारी आ गई हो। उसने अपनी पत्नी से कहा—"लगता है, मौत नज़दीक आ गई है। इतने दिन जिया, पर कभी कुछ पुण्य न किया। अगर यह मौत एक साल बाद आती तो क्या अच्छा होता।" वह यूँ कहता कहता अकड़-सा गया। कुबेर की पत्नी घबरायी। उसने वैद्य को बुलवाया, वैद्य आया। वह न बता सका कि क्या रोग था। वह चला गया। कुबेर ने अपनी साँस, जिस तरह बैरागी ने बताया था, उस तरह फुला लिया।

उसके यहाँ करीब करीब दो सौ आदमियों को खाना मिल रहा था। वे सब कुबेर के चारों ओर बैठकर, रोने धोने लगे। कुछ ने कहा, बड़े बड़े लोग भी मौत से नहीं बच सकते।

ठीक उसी समय बैरागी वहाँ आया। उसने लोटे में दूध लेकर सबको चुप रहने का ईशारा करके कहा—"यदि तुम में से

कोई इनको जिलाना चाहता हो, तो बताओ। यह देखो औषधी।"

कुबेर की पत्नी वगैरह ने बैरागी के पैरों पर पड़कर कहा—"रक्षा कीजिये! आप जो चाहेंगे, देंगे। इनको यह औषधी देकर जिलायें।"

इस पर बैरागी ने कहा—"पगलो, कोई भी औषधी काम नहीं करती, जब मौत पास आ जाती है? इस औषधी को यदि तुम में से किसी ने लिया, तो वह तुरत मर जायेगा। उसकी बची आयु के कारण यह मरा आदमी बहुत समय तक जीवित रह सकेगा। जो इसको अपनी आयु देने को तैयार हो, वह इस औषधी को पी जाये।"

कोई नहीं बोला। कुछ देर देखकर बैरागी ने पूछा—"कोई भी इस आदमी के लिए नहीं मरना चाहता?" कोई जवाब नहीं मिला।

"अरे....अरे, इस आदमी ने आप सब लोगों को सुखी रखने के लिए सारी जिन्दगी बिता दी और परलोक जाने के लिए कोई भी पुण्य न किया और अब एक भी उसके लिए प्राण देने को तैयार नहीं है।" बैरागी ने कहा।

"स्वामी, आँखें खुल गई हैं।" कहकर कुबेर उठ बैठा। सब चकित हो गये। स्तब्ध हो गये।

इसके बाद कुबेर ने अपने बेकार बन्धुओं को भेज दिया। अपनी सम्पत्ति को उसने दान-धर्म और पुण्य कार्यों में लगा दिया। व्यापार अपने लड़कों को सौंप दिया और स्वयं धार्मिक जीवन बिताने लगा।

घर की महिमा

पन्नालाल जिस गाँव में रहा करता था, उसमें गोपीनाथ नाम का एक गृहस्थी भी रहा करता था। वे करीब करीब एक ही उम्र के थे। दोनों एक दूसरे को बचपन से जानते थे। उनमें भेद यह था कि गोपीनाथ का बड़ा परिवार था। और उसके पास इतनी सम्पत्ति न थी कि परिवार का अच्छी तरह भरण-पोषण हो सके। फिर भी कभी गोपीनाथ किसी के सामने हाथ न पसारता।

जब कभी पन्नालाल गोपीनाथ के घर जाता, तो बच्चे "मामा मामा" कहते उसको घेर लेते। पन्नालाल, मिठाई या फल वगैरह लेकर ही उनके पास जाया करता था, वह उन्हें दे दिया करता था।

जब एक दिन पन्नालाल, उसके घर गया, तो वहाँ बड़ी गड़बड़ी मची हुई थी। कुछ साल पहिले गोपीनाथ ने कस्बे में किसी महाजन से एक हज़ार रुपया लिया था। वह उसे दे न सका और सूद पर सूद बढ़ता गया, अब गोपीनाथ को दो हज़ार रुपये देने थे। यह देख कि गोपीनाथ उसे दे नहीं पायेगा और देरी की गई, तो कर्ज़ सम्पत्ति से अधिक बढ़ जायेगा महाजन सम्पत्ति कुर्क करवाने आया था। ग्रामाधिकारी भी उसके साथ था।

पन्नालाल जब पहुँचा, तो गोपीनाथ उसकी पत्नी, बच्चे वगैरह, सब घर के बाहर खड़े थे। "अरे, बिना किसी को बताये, तुमने यह क्या काम किया?" गोपीनाथ की माँ उसे फटकार रही थी।

सेठ कह रहा था, "और कितने दिन इन्तजार करूँ? कई बार मैंने इन्हें याद दिलाया और क़र्ज़ बढ़ता गया। पहिले घर खाली करो।"

पन्नालाल का ऐसे समय पर आना, गोपीनाथ को बिल्कुल पसन्द न था। चूँकि पन्नालाल बिना सहायता किये बगैर रहेगा नहीं और गोपीनाथ इस प्रकार की सहायता नहीं चाहता था।
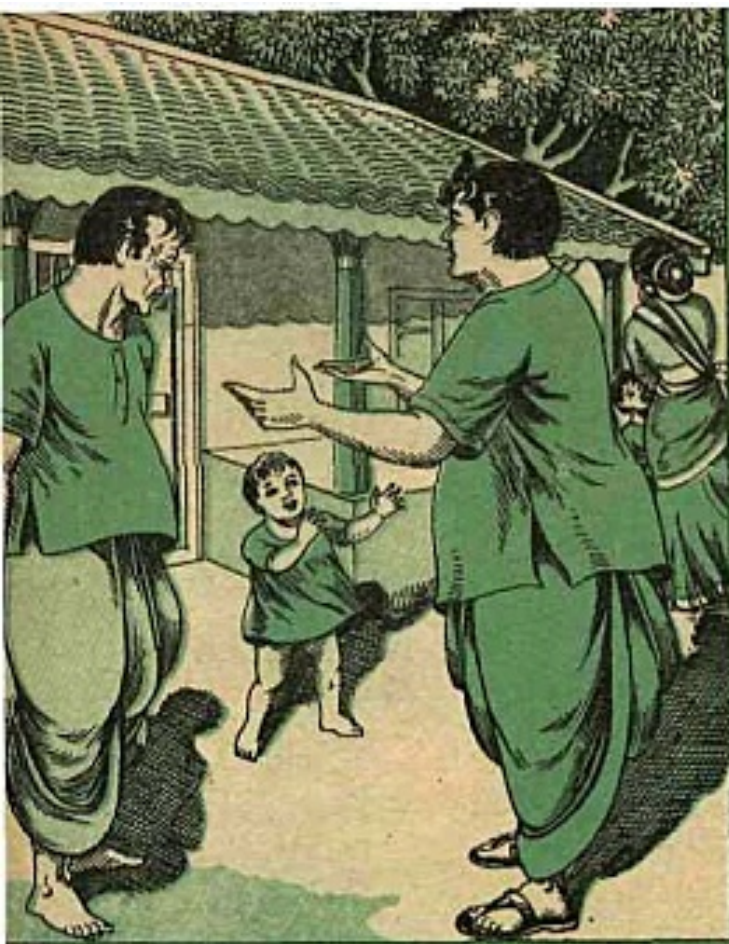
पन्नालाल सेठ को और ग्रामाधिकारी को अलग ले गया और उनसे बातचीत करके उसने सब कुछ मालूम कर लिया। अपना कर्ज लेने के लिए सेठ बड़ा जिद कर रहा था। यही नहीं, वह गाँव में कुछ सम्पत्ति बनाकर ग्राम्य जीवन व्यतीत करना चाहता था। कस्बे में उनका काम धाम देखने के लिए उसका पिता था और छोटा भाई भी था।

पन्नालाल ने सेठ से एक बात कही। फिर गोपीनाथ के पास आकर कहा—"अरे घर छोड़कर कहाँ रहोगे? चलो अन्दर, मेरे होते तुम घर छोड़ देना चाहते थे?" उसने गोपीनाथ के बच्चों को बुलवाया, जो कुछ खाने की चीजें वह लाया था उसने उनको खाने को दीं और कहा—"जाओ, आराम से खेलो कूदो।"

गोपीनाथ की आँखों में तरी आ गई, "अरे भाई पन्ना, जो पूरी तरह डूब गया हो उसकी तुम क्या मदद करोगे? यह क़र्ज़ तो चुकेगा नहीं। आज नहीं, तो कल यह घर, यह ज़मीन सब क़र्ज़वाले ले ही जायेंगे।"

"यह सब तुम्हें मुझे बताने की ज़रूरत नहीं है। मगर तुम घर छोड़कर न जाओ।" पन्नालाल ने गोपीनाथ से कहा।

वह सेठ और बाकी लोगों को लेकर अपने घर गया। उसने उनसे कहा कि गोपीनाथ का कर्ज़ वह चुका देगा। पर उसके पास उतना पैसा न था। उसे कर्ज़ देनेवाले भी न थे। बिना आगा पीछे देखे घर का सब कुछ दे दिया जाय, तो उसको कौन कर्ज़ देगा? पन्नालाल का नाम तो बड़ा था। पर पास पैसा कम था।

सेठ ने पन्नालाल से कहा—"आप जैसा भी कहें, मुझे मंजूर है। पर यह कर्ज़ आज चुक जाना चाहिए। चाहे नकद दीजिये, नहीं तो अच्छी जायदाद दीजिये।"

"अच्छा तो मैं अपना घर और खेत गिरवी पर रख देता हूँ। मेरी सम्पत्ति, गोपीनाथ की सम्पत्ति से कुछ अधिक ही होगी। उसे लेकर, आप गोपीनाथ का कर्ज़ रद्द कर दीजिये।" पन्नालाल ने कहा।

सेठ इसके लिए मान गया। पन्नालाल की ज़मीन जायदाद अपने नाम लिखवाकर, सेठ ने उसको ऊपर से सौ रुपये भी दिये।

इस सब के बाद पन्नालाल अपने परिवार के साथ अपने ससुराल चला गया। उसकी पत्नी मीनाक्षी अपने माँ बाप की इकलौती थी। इसलिए माईके की सारी सम्पत्ति उसी की थी। उनके पास भी एक घर और कुछ ज़मीन थी।

जब वे घर छोड़कर जाने लगे, तो पन्नालाल की माँ ने उससे कहा—"मैं तो जानती ही थी कि किसी न किसी दिन तुम यह नौबत लाओगे।"

"अब क्या हो गया है माँ? यदि हम किसी का भला करेंगे, तो हमारा भी कोई भला करेगा।" पन्नालाल ने कहा।

सेठ अपनी पत्नी और बच्चों के साथ आकर पन्नालाल के घर रहने लगा। तब से सेठ का जीवन ही बदल-सा गया।

जब पन्नालाल जा रहा था, तो लोगों ने सोचा था कि परोपकार ही जा रहा था। पर अब वे सोच रहे थे कि पन्नालाल से भी अच्छा आदमी आया था। दोनों ही परोपकारी थे, पर फर्क यह था कि पन्नालाल धनी न था। वह प्रायः श्रम दान ही अधिक करता था। सेठ के पास बहुत पैसा था और वह पैसा देता था।

परन्तु कुछ दिनों बाद एक अफवाह उड़ी। वह यह कि वह सेठ स्वयं स्वभाव से दानी नहीं था। जब से उसने पन्नालाल के घर में प्रवेश किया था तभी से उसमें यह दानशीलता आयी थी। इसका असली कारण पन्नालाल का घर ही है। उसमें अवश्य कोई महिमा है, लोग कहने लगे।
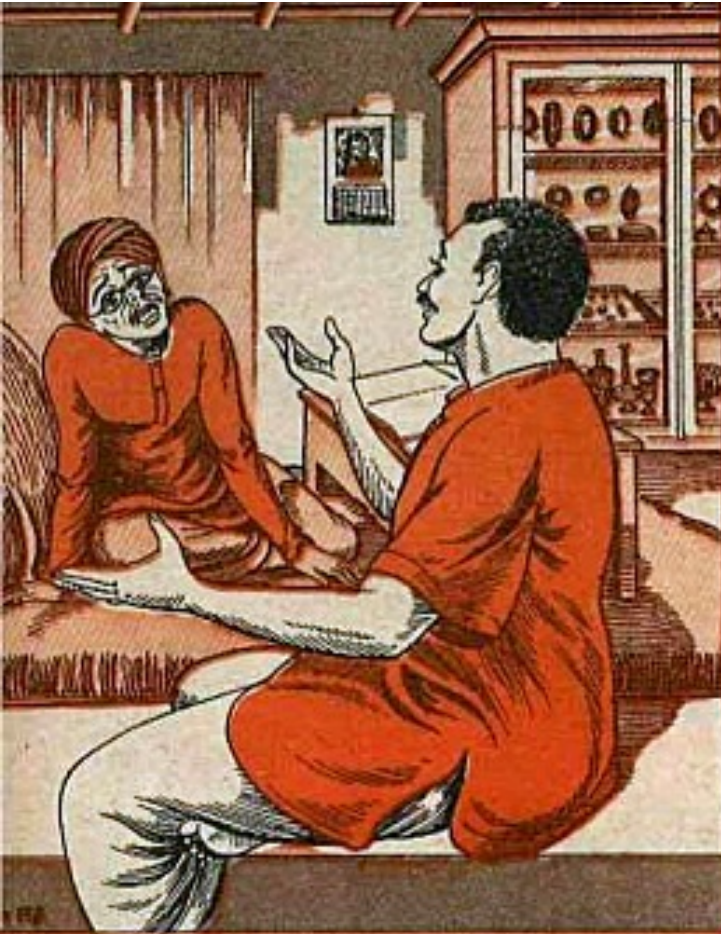
उसने पन्नालाल के घर की मरम्मत करवायी। दो तीन नये कमरे और वराण्डा बनवाया। कूलियों को बँधी मजूरी से अधिक दिया। उसके बाद वह हमेशा दान धर्म करता रहता। हर किसी की मदद करता। जल्दी ही उसकी कीर्ति इतनी बढ़ी कि लोग उसको दानकर्ण कहने लगे। उस गाँव के लोगों ने पहिले सुन रखा था कि यह सेठ निरा कंजूस था। कौड़ी कौड़ी के लिए मरता था। इसलिए उसको दान आदि, करता देख, वे बड़े चकित हुए।

कस्बे में सेठ के पिता को अपने लड़के की दानशीलता और उसके कारण के बारे में एक साथ ही खबर मिली। यह जानकर कि उसका लड़का गाँव जाकर कुछ कमाना धमाना अलग दान आदि करके धन खराब कर दानकर्ण का नाम भी पा गया था, उसको बड़ा गुस्सा आया। यह जानकर कि उसके लड़के का बदलने का कारण वह घर ही था, जिसमें वह रह रहा था।

वह अपने लड़के के पास गया। उससे कहा—"तुम इस घर को तुरत बेचकर कस्बे में चले आओ। नहीं तो जो कुछ है, वह सब काफ़ूर हो जायेगा।"

सेठ ने अपने पिता से कहकर देखा कि उसे उस घर में सब तरह का आराम था। परोपकार करने से उसको बड़ा आनन्द मिल रहा था। उसको यह कहता सुन पिता की चिन्ता और भी बढ़ गई। उसने कहा कि गाँव में एक क्षण भी न रहे। उसने तुरत पत्नी और बच्चों को कस्बे जाने के लिए कहा।

सेठ ने पन्नालाल के घर सम्पत्ति को बेचने की बहुत कोशिश की। पर सफल न हो सका। चूँकि जो कोई उस घर में रहेगा, उस पर जल्दी ही भीख माँगने की नौबत आ जायेगी। इसलिए उसे खरीदने की कोई हिम्मत नहीं कर पाता था।"

"उस घर को आप चुपचाप पन्नालाल को ही वापिस कर दीजिये। उसे और कोई नहीं खरीदेगा। उसमें बिना किराये के भी कोई नहीं रहेगा।" ग्रामाधिकारी ने सेठ के पिता को सलाह दी। सेठ का पिता ग्रामाधिकारी को साथ लेकर पन्नालाल की ससुराल गया और उससे कहा—"भाई, तुम्हें और तुम्हारी सम्पत्ति को एक लम्बी नमस्ते। उसे तुम वापिस ले लो। यह हमारे फ़ायदे का नहीं है।"

पन्नालाल फिर अपने गाँव आ गया और अपने घर में रहने लगा। उसे कोई हानि नहीं हुई और घर की मरम्मत ही नहीं हो गई थी, उसे बढ़ा भी दिया गया था और आरामदेह कर दिया गया था।

राजा का सत्कार

एक गाँव में गोविन्द नाम का एक युवक रहा करता था। उसकी बुद्धि बहुत तेज़ थी। पर वह बड़ा कमज़ोर था। चूँकि ग्राम्य जीवन में, शारीरिक काम अधिक होता है, इसलिए गोविन्द को नलायक बताया जाता। उसका भाई और उसकी भाभी, उसे निकम्मा समझकर, दिन, रात खिझा करते थे। परन्तु गाँववालों को, गोविन्द बड़ी अच्छी सलाह दिया करता। उसकी सलाह के कारण उनका फायदा भी होता। वे गोविन्द के भाई से कहा करते—"सचमुच तुम्हारा गोविन्द बड़ा अक़्लमन्द है।"

गाँववालों को अपने भाई की अक़्ल की दाद देना भी गोविन्द के भाई को पसन्द न था। एक दिन उसने कहा—"यदि वह इतना अक़्लमन्द है, तो क्यों नहीं, राजसभा में जाकर सम्मान पाता? मुझसे क्यों काम करवाता है?"

"अगर वह इतना कामकाज़ी हो, तो कमी किस बात की है?" भाभी ने पूछा।

ये बातें गोविन्द ने सुनी। उसने राजा का सम्मान पाना चाहा। नववर्ष के दिन, राजा का दरबार लगता था और उसमें राजा लोगों से कुछ प्रश्न किया करता था। जो इन प्रश्नों का ठीक उत्तर देते, उनको ईनाम दिया जाता था। नववर्ष पास ही था। उस दिन गोविन्द राजाधानी पहुँचा और राजसभा में गया।

जो राजा के प्रश्नों का उत्तर दे सकते थे, उनको अलग स्थान में बिठाया गया था। राजा ने उनसे मामूली प्रश्न किये।

"हमारे राज्य में सत्यवादी कितने हैं?" यह पहिला प्रश्न था। किसी ने कहा कि राज्य में कई लाख सत्यवादी हैं। किसी ने कहा कि सौ से अधिक न होंगे। किसी ने कहा कि जन संख्या में दस प्रतिशत सत्यवादी होंगे।

"आपके पास काम करनेवाले पाँच सौ आदमी सत्यवादी हैं।" गोविन्द ने कहा।

"यह कैसे कह सकते हो?" राजा ने पूछा।

"उनमें अगर कोई सत्यवादी न होता, तो उसको कभी का भेज चुके होते।" गोविन्द ने कहा।

राजा ने खैर, वह बात वहीं छोड़ दी। उसने एक और प्रश्न किया—"मुझे मेरे मन पसन्द के कपड़े कैसे मिल सकते हैं?"

"आपके नौकर आपको लाकर देंगे।" "लोग आपको उपहार में देंगे।" "रुई से आयेंगे।" हर किसी ने कुछ ऐसा ही जवाब दिया। "जो काम जानते हैं, ऐसे जुलाहे, जैसा आप कपड़े चाहेंगे, वैसे बुनकर दे देंगे।" गोविन्द ने कहा।

"कोई ऐसा असत्य बताओ, जिस पर किसी को विश्वास न हो?" राजा ने पूछा।

"मुझे बड़ा सिर दर्द हो रहा है।" एक ने कहा। "मैं हवा में उड़ा था।" दूसरे ने कहा। "मेरे पैर टूटकर, फिर जुड़ गये।" एक और ने कहा।

"इस सभा में बैठे लोग भैंस हैं।" गोविन्द ने कहा।

इसके बाद राजा ने कुछ को कुछ ईनाम दिये। गोविन्द को भी ईनाम मिला। पान के साथ एक सोने की मुहर और कपड़े दिये गये थे। राजा ने उसको सहभोजन में सम्मिलित होने के लिए निमन्त्रित किया। गोविन्द ने सभा के समाप्त होते ही,

राजा ने जो कपड़े दिये थे, वे किसी और को दे दिये और अपने पहिले के कपड़े पहिन कर ही सहभोज में गया। सिवाय उसके, बाकी सब राजा के दिये हुए कपड़े पहिन कर ही आये थे। भोजन में भी उसने वही खाया, जो रोज़ खाया करता था, चटनी, दाल वगैरह। उसने अच्छे अच्छे पकवान, खीर वगैरह छुये तक नहीं।

गोविन्द के बारे में राजा के पास खबर पहुँची। उसने गोविन्द को बुलाकर कहा—"मैंने जो ईनाम में कपड़े दिये थे, उन्हें तुमने क्यों नहीं पहिना? भोजन में भी तुमने अच्छे पकवान छुये तक नहीं। यह क्या राजा का अपमान नहीं है?"

"महाराज! मैं गरीब हूँ। यदि आपके दिये हुए कपड़े मैंने अभी पहिन लिये, तो बाद में, मैं अपने मामूली कपड़े न पहिन सकूँगा—इसलिए मैंने उन्हें दान कर दिया। रोज मैं दाल चटनी खाता हूँ। यदि यहाँ मैंने ये सब पकवान खाये और इनकी आदत पड़ गई, तो दुनियाँ-भर के सपने देखने लगूँगा और न मालूम कैसे कैसे दुर्गुण पैदा हो जायेंगे। इसलिए मैंने वही किया, जो मै कर सकता था। मैं राजा का अपमान बिल्कुल नहीं करना चाहता था।" गोविन्द ने कहा।

"जो सोने की मुहर मैंने दी थी, क्या उसे भी दान दे दी है?" राजा ने पूछा।

"नहीं, महाराज! वह मेरे पास ही है। ताकि मेरा भरण-पोषण करनेवाले भाई को उसे दे सकूँ।" गोविन्द ने कहा।

गोविन्द की सद्बुद्धि की राजा ने बड़ी प्रशंसा की। उसको हज़ार सोने की मुहरें दीं। उसको अपने दरबार में अच्छी नौकरी भी दी।

अंगारवती की कथा

वत्स के राजा उदयन ने वासवदत्ता से कैसे विवाह किया था, इसकी कहानी हम पहिले ही दे चुके हैं। वासवदत्ता के पिता का नाम था, चण्ड महासेन महाराज। उसका विवाह कैसे हुआ था, अब बतायेंगे। चण्ड महासेन ने अपने यौवन में चण्डिका के लिए बड़ी तपस्या की थी। उसकी तपस्या पर सन्तुष्ट होकर, चण्डिका प्रत्यक्ष हुई और उसने उससे वर माँगने के लिए कहा। चण्ड महासेन ने वर माँगा कि उसे अत्युत्तम खड्ग और अत्यन्त सुन्दर पत्नी दें। देवी ने अपने हाथ की तलवार उसे दे दी और कहा कि उसे अच्छी पत्नी भी मिल जायेगी।

चण्ड महासेन इसकी प्रतीक्षा कर रहा था कि उज्जयिनी नगरी में आफ़त-सी आ पड़ी। जो कोई नगर पालक नियुक्त किया जाता, उसे कोई जन्तु खा लेता। यह क्या बात थी, यह जानने के लिए चण्ड महासेन अपनी तलवार लेकर रात में गश्त करने लगा।

एक दिन रात को उसको गली में एक आदमी दिखाई दिया। तुरत चण्ड महासेन ने तलवार से उसका गला काट दिया। इतने में कोई राक्षस आया और मरे हुए आदमी का सिर उठा ले गया। यह सोच नगर पालक को वह राक्षस ही मार रहा था, चण्ड महासेन ने एक हाथ से उसके बाल पकड़े और दूसरे हाथ से उसका गला काटने के लिए तैयार हो गया।

वह राक्षस ज़ोर-ज़ोर से रो-रोकर कहने लगा—"महाराज, मुझे क्यों मारते हो? नगर पालक मैं नहीं खा रहा हूँ। एक और खा रहा है।"

शिकार खेलने गया। वह शिकार खेल रहा था कि उसे एक अजीब सूअर दिखाई दिया। वह एक छोटी-मोटी पहाड़ी के बराबर था। उसकी आँखें अंगारों की तरह थीं। यह सोच कि यह मामूली सूअर नहीं है, हो न हो, अंगारक ही है, चण्ड महासेन ने उस पर बाण छोड़े। उसने उन बाणों की तो परवाह की ही नहीं, राजा के रथ को, उसने एक धक्के से गिरा दिया, भूमि की एक सुरंग में घुस गया और कहीं चला गया।

"वह कौन है? कहाँ रहता है?" राजा ने राक्षस से पूछा।

"उसका नाम अंगारक है। वह पाताल में रहता है। वह रात में आकर नगर पालक को खा रहा है। यही नहीं वह कितनी ही राजकुमारियों को उठा ले जाकर, अपनी लड़की अंगारवती की, उनसे सेवा करवा रहा है। वह दिन में, जंगल में घूमता रहता है। उसे मारकर अपनी इच्छा पूरी करो।" राक्षस ने कहा।

चण्ड महासेन उस दिन राक्षस को छोड़ घर चला गया। फिर वह जंगल में शिकार खेलने गया।

चण्ड महासेन मुश्किल से उस सुरंग में घुसा और थोड़ी देर बाद एक सुन्दर नगर में पहुँचा। उसे सूअर तो नहीं दिखाई दिया परन्तु एक कुँये के पास सौ सहेलियों के बीच, बैठी एक अत्यन्त सुन्दर कन्या उसको दिखाई दी।

उसको देखते ही वह उसके पास उठकर आयी। "आप कौन है? किस काम पर आये हैं?" उसने पूछा। चण्ड महासेन ने कहा कि वह एक भयंकर सूअर का पीछा करता आया था और वह सूअर एक सुरंग में घुस गया था और उसका कहीं पता नहीं लग रहा था, उसने बताया।

उसकी आँखों में प्रेम और दया छलकने लगे। "वह सूअर अंगारक हैं। उनका देह वज्र-सा कठोर है। वह बड़ा बलवान हैं। अब सूअर का वेष छोड़कर, सो रहे हैं। यदि वह सोकर उठे, तो आप पर ज़रूर आफ़त आयेगी। मैं उसकी लड़की हूँ। मेरा नाम अंगारवती है। आप पर आनेवाली आपत्ति के बारे में सोचकर, मेरा दिल बैठा जाता है।"

चण्ड महासेन को लगा—जिस पत्नी की बात देवी ने की थी, वह यह अंगारवती ही होगी। उसने उससे कहा—"यदि तुम सचमुच मुझे चाहती हो, तो जैसा मैं कहूँ, वैसा करो। जब तुम्हारे पिता सोकर उठे, तो तुम उनके पास रोते हुए जाओ। वे पूछेंगे कि क्यों रो रहे हो? तो तुम उनसे पूछना कि अगर तुमको किसी ने मार दिया, तो मेरा क्या होगा?"

चूँकि वह चण्ड महासेन को चाहने लगी थी, इसलिए अंगारवती पिता के उठते ही उसके पास जाकर रोने लगी। अंगारकासुर ने पूछा—"बेटी, क्यों रो रही हो?"

"मुझे डर है, कहीं आपको कोई मार न दे?" बेटी ने कहा।

"डरो मत बेटी, मेरा शरीर वज्र के समान है। कोई अस्त्र मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। यही नहीं, मेरे प्राण बाँये हाथ की हथेली में हैं। क्योंकि उसमें हमेशा धनुष रहता है, इसलिए कोई मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।" अंगारक ने कहा।

चण्ड महासेन ने, जो वहीं कहीं छुपा हुआ था, अंगारक की यह बात सुनी। उसको अंगारकासुर के प्राण का रहस्य मालूम हो गया था।

फिर अंगारक स्थान करके, शिव की पूजा करने बैठे गया। उसी समय चण्ड महासेन धनुष, बाण लेकर, अंगारक के सामने जा खड़ा हुआ, "मुझसे युद्ध करो।" उसने उसको युद्ध के लिए ललकारा।

पूजा के समय, अंगारक मौन रखता था। चूँकि दायाँ हाथ खाली न था, उसने बाँये हाथ को उठाकर, ईशारा किया— "कुछ देर ठहरो।" तुरत चण्ड महासेन ने बाण उठाया और अंगारक के बाँये हाथ के प्राण स्थान में छोड़ दिया।

अंगारक ने गिरकर, प्राण छोड़ते हुए कहा—"जिसने मुझे उस समय मारा है, जब कि मेरा मुख सूखा था, यदि उसने मेरे लिए प्रति वर्ष जल तर्पण न किया, तो उसके पाँच मन्त्री मर जायेंगे।"

अंगारक के घर जाने के बाद, चण्ड महासेन अंगारवती को अपने साथ उज्जयिनी ले गया। वहाँ उससे यथाविधि विवाह कर लिया। अंगारक की अन्तिम इच्छा के अनुसार चण्ड महासेन और उज्जयिनी की प्रजा प्रति वर्ष उदकदान महोत्सव मनाने लगे। चण्ड महासेन के बाद, उसके लड़के गोपाल ने भी यह उत्सव चालू रखा।

गद्दी के योग्य

मणिशील राज्य के महाराजा जगन्मित्र की दो पत्नियाँ थीं। पर उनके कोई सन्तान न थी। बुढ़ापा पास आ रहा था, इसलिए राजा ने एक लड़के को गोद लेकर उसका राज्याभिषेक करने का निश्चय किया।

यह रानियों को जब पता लगा, तो उन्होंने अपने अपने सम्बन्धियों में से एक एक युवक को बुलवाया और जिद पकड़ी कि उसके सम्बन्धी को ही गोद लिया जाये। राजा किसी की बात न ठुकरा सका। उसने अपने मन्त्री की सलाह माँगी। मन्त्री ने कहा कि दोनों को कुछ समय तक पास रखा जाय। फिर मालूम हो जायेगा कि उनमें कौन योग्य है। फिर मन्त्री ने बड़ी रानी के सम्बन्धी पद्ममित्र नाम के युवक से कहा—"राजा, आपको कभी भी गोद लेकर आपका राज्याभिषेक कर सकते हैं। दो सप्ताह के लिए सारा राज्य देख आइये।" उसको एक रथ और आवश्यक धन देकर मन्त्री ने भेज दिया।

पद्ममित्र पश्चिम की ओर कुछ दूर गया था कि "काले टीले" के पास चोरों ने उसे घेर लिया। उन्होंने उसके कपड़े, धन वगैरह सब लूट लिया। फिर उसे डराया "तुम कौन हो? कहाँ से आ रहे हो? कहाँ जा रहे हो? सच बताओ। नहीं तो तुम्हें मार देंगे।"

पद्ममित्र डर गया। उनको अपनी तरफ़ करने के लिए उसने कहा—"मैं मणिशील का होनेवाला राजा हूँ। यदि तुमने मुझे अभी छोड़ दिया, तो राजा बनने के बाद तुम्हें अच्छा ईनाम दूँगा।"

यह जानकर कि वह राजा होनेवाला था, चोरों ने सोचा कि वे उसके द्वारा बहुत कुछ कमा सकेंगे।

"राजा को अब एक पत्र लिखो। कहो कि तुम्हें चोरों ने पकड़ लिया है। जब तक "काले टीले" के पास हमारे आदमी को दस हज़ार रुपये न दिये जायेंगे, तब तक तुम नहीं छोड़े जाओगे और यह सब चार दिन में न कर दिया गया, तो तुम्हें मार दिया जायेगा। जो पैसा लाये उसे बेहथियार होना होगा। यदि किसीने हमारे आदमी को पकड़ने की कोशिश की, तो तुम्हारे प्राण नहीं बचेंगे।" चोरों ने कहा। पद्ममित्र से इस प्रकार पत्र लिखवाकर, उसकी आँखों में पट्टी बाँधकर पहाड़ों के बीच की गुफ़ा में वे उसे ले गये।

पद्ममित्र का पत्र देखते ही राजा घबराया। बड़ी रानी ने कहा कि पैसे के बारे में आगा पीछा न किया जाये। जैसे भी हो उसके सम्बन्धी की रक्षा की जाये। बड़ी रानी रोयी धोयी। एक निहत्थे के हाथ राजा ने "काले टीले" के पास दस हजार रुपये भेजे। वहाँ चोर पहिले ही प्रतीक्षा कर रहा था। वह धन लेकर आदमी को वहाँ थोड़ी देर ठहरने के लिए कह गुफ़ा गया। पद्ममित्र की आँखों में पट्टी बाँधकर उसे लाया और "काले टीले" के पास उसे छोड़कर चला गया।

पद्ममित्र राजमहल वापिस आया। उसने सबको बुरी तरह दुत्कारा। जो कुछ हुआ था, उसे सुननेवालों में छोटी रानी का सम्बन्धी पुष्पमित्र भी था। उसने पद्ममित्र से पूछा—"यदि चोरों की गुफ़ा में सैनिकों को ले जाया गया, तो उन्हें मारा जा सकता है। क्या तुम यह काम नहीं कर सकते? कितने चोर हैं?"

"आँखें बाँधकर मुझे ले जाया गया था। उनकी गुफ़ा कहाँ है और कितने चोर हैं? यह कैसे मालूम हो सकता है?" पद्ममित्र ने खिझकर कहा।

"इन चोरों को मैं पकड़ूँगा। मुझे एक रथ और कुछ धन दिलवाइये।" पुष्पमित्र ने मन्त्री से कहा। उसने जो कुछ करने की सोची थी, वह सब मन्त्री को सविवरण बताया।

वह रथ में सीधे "काले टीले" के पास गया। वहाँ रथ रोका। तुरत चार पाँच चोरों ने आकर उसे घेर लिया। "जो कुछ तुम्हारे पास है, उसे दे दो।" उन्होंने कहा।

"मैं पैसा तुम्हारे लिए ही लाया हूँ। मैं आया ही इसीलिए हूँ। अरे जो राजा होने जा रहा है, क्यों तुमने उससे इतना कम पैसा लिया? मुझे गोदी न लेकर, वह बूढ़ा राजा उसको गोद ले रहा है। पद्ममित्र के द्वारा हम लाखों कमा सकते हैं। चलो, हम तुम्हारे गुप्त स्थान पर चलें।" पुष्पमित्र ने कहा। उसने अपने रथ चलानेवाले से कहा—"अरे, तुम यहीं रहो यदि कोई सैनिक आते दीखें, तो शंख बजाना।"

चोरों ने पुष्पमित्र का विश्वास कर लिया। उसे वे अपनी गुफ़ा में ले गये। रथ चलानेवाले को पहिले ही बता दिया गया था कि उसे क्या करना था? इसलिए कुछ दूर तक वह चोरों के पीछे पीछे उनकी गुफ़ा तक गया। चोरों के, पुष्पमित्र के साथ गुफ़ा में जाते ही वह पीछे भागा और बड़ी तेज़ी से रथ को नगर की ओर ले गया।

पुष्पमित्र ने चोरों को आसानी से अपने वश में कर लिया।

"अब तुम्हें इस गुफ़ा को छोड़कर, एक और जगह जाना होगा। वह पद्ममित्र बड़ा दुष्ट है। उसकी आँखों में तुमने पट्टी बाँध दी थी, तो भी उसने गुफ़ा का रास्ता मालूम कर लिया था। तुम कितने कदमों बाद किस तरफ़ मुड़े थे, कहाँ चढ़े थे, कहाँ उतरे थे, यह सब वह जानता है। इसलिए छुपने के लिए मैं उससे अच्छी जगह दिखाता हूँ। मेरे साथ आओ।"

चोरों को उसकी बात पर विश्वास हो गया। गुफ़ा में जो धन उन्होंने छुपा रखा था, उसका एक एक गठ्ठर सिर पर रखा। पुष्पमित्र के साथ निकल पड़े। वे कुछ दूर गये थे कि सैनिकों ने उन्हें घेर लिया। एक चोर के हाथ में भी, कोई हथियार न था। इसलिए सब चोर आसानी से पकड़े गये।

मन्त्री ने पुष्पमित्र की चतुरता की सराहना की, उसने राजा को सलाह दी कि उसको गोदी लेना ही अच्छा था। राजा ने पुष्पमित्र को गोदी ले लिया और उसका राज्याभिषेक करवाया।

राम तो अत्यन्त दुःख में थे ही, इस बीच विभीषण ने एक और बात बतायी—"निकुम्भ जब होम कर रहा हो, तब किसी ने तुम से युद्ध किया, तो उससे तुम अवश्य मारे जाओगे।" यह ब्रह्मा ने इन्द्रजित को बताया था। अब वह होम भंग करने का अवसर मिला है।

राम की आज्ञा पर लक्ष्मण, सुग्रीव, हनुमान, विभीषण वानर सेना को साथ लेकर, इन्द्रजित का होम भंग करके, उसको मारने के लिए निकल पड़े।

उनके रास्ते को रोके, राक्षस सेना खड़ी थी। विभीषण ने लक्ष्मण से कहा कि इन्द्रजित के होम पूर्ण होने से पहिले इस सेना का नाश करना होगा। यदि यह सेना नष्ट कर दी गई, तो होम के समाप्त होने से पहिले ही इन्द्रजित आ जायेगा। तब उसे असानी से मार सकते हैं।

यह सुन वानर सेना ने राक्षस सेना पर आक्रमण किया। दोनों बड़े ज़ोर शोर से लड़े। वानर और राक्षस बड़ी संख्या में मारे गये। पर राक्षस वानरों के सामने घबरा गये।

यह खबर सुनते ही इन्द्रजित होम पूरा किये बगैर ही चला आया और रथ

पर सवार हो गया। राक्षस सेना ने उसके रथ को घेर लिया।

परन्तु हनुमान पर्वत के आकार में बड़े-बड़े वृक्षों से, राक्षसों को मारने लगा। हज़ारों राक्षसों ने हनुमान को चारों ओर से घेर लिया। राक्षस उस पर तरह तरह के हथियारों से हमला कर रहे थे, पर हनुमान ने उन सब का अकेला ही मुकाबला किया।

राक्षसों को हनुमान द्वारा सताते देख, इन्द्रजित ने अपना रथ उसकी ओर मोड़ा। इन्द्रजित के बाणों से हनुमान बुरी तरह घायल हो गया। हनुमान चिल्लाया— "दुष्ट कहीं का, यदि तू सचमुच वीर है, तो बिना हथियारों के खाली हाथों से मुझ से युद्ध कर।"

"इन्द्रजित बाणों से हनुमान को मार सकता है। तुम जाकर, इन्द्रजित का मुकाबला करो, युद्ध करके उसे मार दो।" विभीषण ने लक्ष्मण से कहा।

तुरत दोनों निकुम्भी की ओर गये। वह काली राक्षसी की तरह के पेड़ के नीचे थी, यहाँ ही इन्द्रजित भूतों को बलि देकर, युद्ध के लिए निकलता था।

"लक्ष्मण, इन्द्रजित के उस पेड़ में प्रवेश करने से पहिले ही उसे, रथ और अश्व और सारथी के साथ मार दो।" विभीषण ने कहा।

लक्ष्मण, तुरत जाकर पेड़ के पास जाकर खड़ा हो गया। उसने इन्द्रजित को युद्ध के लिए ललकारा।

इन्द्रजित ने लक्ष्मण से तो कुछ नहीं कहा पर विभीषण की ओर मुड़कर कहा— "विभीषण, तुम में कुल का अभिमान नहीं है। तुम इस भूमि में पैदा होकर, मेरे साथ ही विश्वासघात कर रहे हो? न तुम

में बन्धु प्रेम है, न धर्म, न ममता? आत्मीयों को छोड़कर, शत्रुओं के नौकर हो गये हो? आत्मीयों में गौरव के साथ रहने की अपेक्षा, शत्रुओं में नीचों की तरह रहना तुम्हें स्वीकार है? तुम्हारी अक्ल मारी गयी है। इसलिए ही मेरे होम में विघ्न डालने के लिए तुम लक्ष्मण को इस पेड़ के पास लाये हो। इस तरह का काम कोई और नहीं करेगा।"

यह सुन विभीषण ने कहा—"बिना मेरी बात जाने क्यों यूँ बातें कर रहे हो? मैं पैदा तो राक्षस कुल में हूँ, पर मेरा स्वभाव राक्षसों का नहीं है। मैं चूँकि अधर्म न सह सका था, इसलिए ही अपने भाई को छोड़कर आया हूँ। सज्जन भी दुर्जनों की दुस्संगति में दुर्जन हो जाता है। दुष्ट सर्पों को दूर ही रखना चाहिए। पर धन और परस्त्री का चाहना, मित्रों का विश्वास न करना, नाश के कारण है। उनके कारण, तुम और तुम्हारे पिता दोनों मरनेवाले हैं। सीता की पुतली बनाकर, उसको मारकर, तुमने राम और लक्ष्मण का अपमान किया है। तुम जीने लायक नहीं हो। लक्ष्मण के हाथ मरकर नरक जाओ।"

इन्द्रजित ने बड़े गुस्से में हथियार लेकर, रथ पर सवार होकर, हनुमान के कन्धे पर सवार लक्ष्मण से कहा—"रात को तुम्हें और तुम्हारे भाई को, मैंने अपने बाणों से मूर्छित कर दिया था। वह या तो तुम भूल गये हो, नहीं तो तुम्हारी मौत पास है। अभी समय है, पीछे हट जाओ।"

इस पर लक्ष्मण ने कहा—"अरे राक्षस! तुम बातों से ही हमें मार रहे हो, तुम सचमुच हमें नहीं मार सकते। जो काम करते हैं, वे डींग नहीं हाँकते। तुम चोर

की तरह हमको बिना दिखाई दिये, हमसे लड़े। वीर ऐसा नहीं करते। आओ, सामने आओ, अपना पराक्रम दिखाओ। बकवास न करो।"

तुरत इन्द्रजित ने बहुत वेग से लक्ष्मणों पर बाण वर्षा शुरु कर दी। उसने सिंहनाद किया। लक्ष्मण ने भी इन्द्रजित पर तेज़ बाण छोड़े। कई अस्त्रों का उपयोग किया। दोनों ज़ोर से युद्ध करने लगे।

इस बीच विभीषण ने लक्ष्मण से कहा—"इन्द्रजित का धीरज छूटता मालूम होता है। उसके मुँह पर उदासी दिखाई देती

है। जैसे भी हो, जल्दी से जल्दी इसे मार दो। सचमुच लक्ष्मण के बाण की चोट से, एक क्षण के लिए इन्द्रजित बेहोश हो गया, फिर सम्भल गया। फिर दोनों ज़ोर से युद्ध करने लगे। दोनों बड़े पराक्रम से लड़े और दोनों ने एक दूसरे को घायल कर दिया।

उनको युद्ध करता देख, विभीषण ने भी युद्ध करना चाहा, वह अपने मन्त्रियों के साथ राक्षसों का संहार करने लगा। वह वानरों से कहने लगा—"अब रावण के वीरों में केवल इन्द्रजित ही बाकी रह गया है और सब को तुमने ही मार डाला है। यह मेरे भाई का लड़का है, इसलिए मैं इसको अपने हाथों नहीं मार सकता हूँ। वह काम लक्ष्मण करेगा। इन्द्रजित की जो राक्षस सहायता कर रहे हैं, तुम उनको मारकर, इन्द्रजित को मारने में, लक्ष्मण की मदद करो।"

वानर वीर पूँछ हिलाते, सिंहनाद करते, जोश में राक्षसों से लड़ने लगे।

इस बीच लक्ष्मण ने इन्द्रजित के सारथी को मार दिया। इन्द्रजित अपने रथ को स्वयं चलाता, युद्ध करने लगा। उस समय

चार वानर वीरों ने इन्द्रजित के रथ के घोड़ों पर हमला करके, उनको मार दिया। उसके रथ को तोड़ फोड़ दिया। इन्द्रजित ज़मीन पर उतरकर, लक्ष्मण से युद्ध करने लगा।

उसने अपने राक्षसों से कहा—"मैं चुपचाप नगर में जाकर, एक और रथ पर सवार होकर आऊँगा। तुम मेरे सामने खड़े होकर, वानरों से युद्ध करते जाओ। यह देखो कि वानर मेरे रास्ते में न आयें।"

वह राक्षसों के पीछे पीछे, बिना वानरों को दिखाई दिये, लंका नगरी में चला गया। वह एक और रथ में युद्ध भूमि में आया और लक्ष्मण और विभीषण का मुकाबला करने लगा। न जाने वह कब चला आया था, इन्द्रजित को एक और रथ में आया देखकर, उन दोनों ने उसके सूझबूझ की सराहना की।

इन्द्रजित और लक्ष्मण में, फिर युद्ध शुरु हो गया। फिर लक्ष्मण ने इन्द्रजित के सारथी को मार दिया। पर रथ के घोड़े, बिना सारथी के ही ऐसे चल रहे थे, जैसे उनको चलना चाहिए था। इन्द्रजित, लक्ष्मण के अतिरिक्त विभीषण पर भी बाण वर्षा करने लगा। विभीषण क्रुद्ध हो उठा और उसने अपनी गदा से, इन्द्रजित के रथ के घोड़ों मार दिया।

इन्द्रजित ज़मीन पर कूदा और उसने एक शक्ति लेकर विभीषण पर फेंकी। लक्ष्मण ने अपने बाणों से, उसके टुकड़े टुकड़े कर दिये। फिर इन्द्रजित और लक्ष्मण एक दूसरे पर, दिव्यास्त्रों का उपयोग करने लगे। जब वे एक दूसरे से टकराने लगे, तो अंगारे, आग, धुँआ निकलने लगे।

जब इस प्रकार कुछ देर तक दोनों ने अपने दिव्य अस्त्रों का नष्ट कर लिया, तो लक्ष्मण ने एक दिव्य बाण से इन्द्रजित का सिर काट दिया। विभीषण और वानरों ने सिंहनाद किया। राक्षस तितर-बितर होकर भाग गये।

इन्द्रजित को मारकर, वानरों को अत्यन्त आनन्द देकर, लक्ष्मण राम के पास विभीषण और हनुमान को साथ गया। लक्ष्मण के यह कहते ही कि "इन्द्रजित मर गया है।" राम ने उसका आलिंगन किया। "अब रावण को मरा समझो। तुमने बहुत अच्छा काम किया है, लक्ष्मण।"

चिकित्सा में निपुण सुशेण ने आकर, लक्ष्मण और विभीषण को लगे बाण निकाल दिये, उनकी चिकित्सा की।

यह सुनते ही इन्द्रजित, जिसने इन्द्र को भी पराजित किया था, लक्ष्मण के हाथ मारा गया था, रावण मूर्छित हो गया।

होश आने पर, वह इन्द्रजित के लिए काफ़ी देर तक दुःखी होता रहा। फिर उसने क्रोध में कहा—"जो सीता, हमेशा राम का ही ध्यान करती रहती है, उसके जीने से क्या फायदा? अभी उसे मारे देता हूँ।" वह तलवार लेकर, सीता की जगह गया। उसके मन्त्री और पत्नियाँ उसके साथ जाने लगीं। मन्त्रियों ने उसको रोकना चाहा, पर रावण ने उनकी न सुनी।

सीता ने जब उसको दूरी पर देखा, तो सोचा कि उसकी मृत्यु समीप आ गई थी।

उसी दिन हनुमान के कन्धों पर सवार होकर, राम के पास न जाने के कारण, वह पछताने लगीं।

आखिर, रावण को सुपार्श्व नामक मन्त्री ने रोकते हुए कहा—"आप जैसे बुद्धिमान को, स्त्रियों को मारना नहीं सोहता। अगर बस चले तो सीता को वश में कर लो, यह क्रोध राम पर दिखाओ। आज चतुर्दशी है। युद्ध की तैयारी करो और कल अमावस्या के दिन राम और लक्ष्मण से युद्ध करो।" रावण को सुपार्श्व की बातें जँची और वह घर वापिस चला गया।

उसने अपने सेनापतियों से कहा—"आज तुम सब जाकर, राम से युद्ध करो। भले ही तुम उसे मार न सको, पर तुम से लड़कर, वह इतना थक जायेगा कि कल मैं आसानी से मार दूँगा।"

राक्षस युद्ध के लिए गये। जब वे वानरों को बुरी तरह मारने लगे, तो राम ने उनसे युद्ध करके उनमें से लाखों को मार दिया। लंका नगर में मरे हुए राक्षसों की पत्नियों के हाहाकार से आकाश गूँजने लगा।

तब रावण स्वयं राम और लक्ष्मण को मारने के लिए निकला। उसके साथ रथों में महापार्श्व, महोदर, विरूपाक्ष आदि भी निकले। सब मिलकर, उत्तर द्वार के पास गये, जहाँ राम और लक्ष्मण थे। राक्षस सेना को युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर आता देख, वानर भी युद्ध के लिए तैयार होकर खड़े हो गये। रावण अपने बाणों से, वानरों को मारता, राम की ओर जाने लगा। यह देख सुग्रीव ने राक्षस सेना पर, पत्थरों की वर्षा करके असंख्य राक्षसों को मार दिया। तब विरूपाक्ष रथ पर से उतरकर, हाथी पर सवार होकर, सुग्रीव से लड़ने लगा। सुग्रीव ने उससे घनघोर युद्ध किया। पहिले हाथी को मार दिया, फिर उसने विरूपाक्ष को मार दिया।
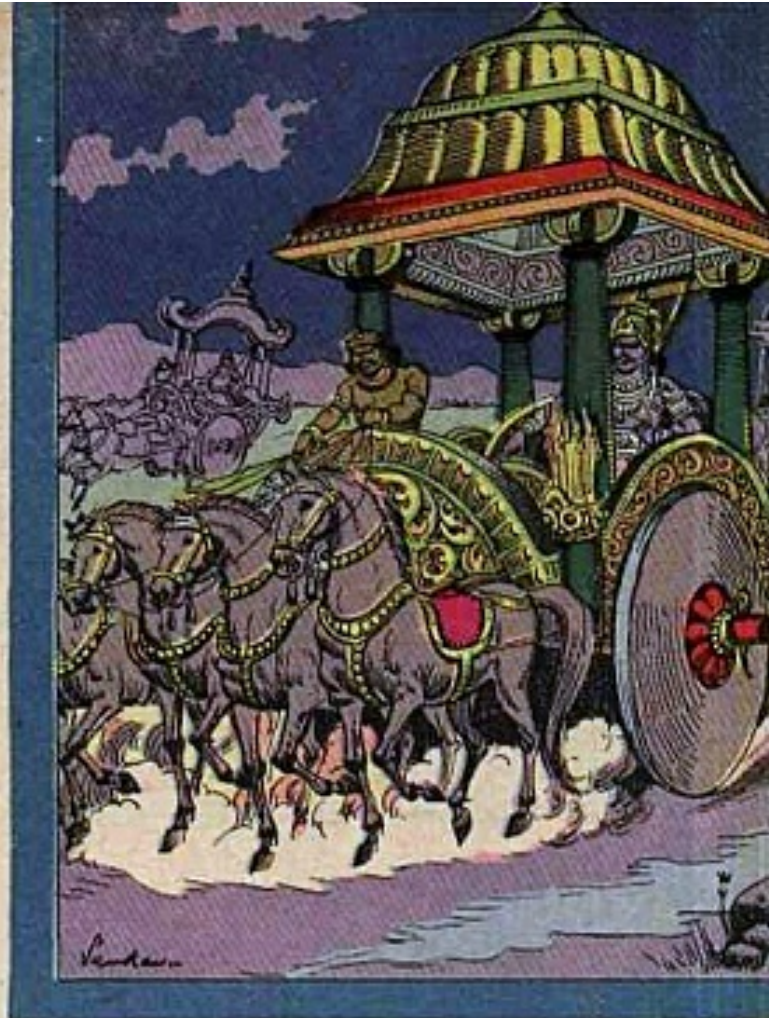
अपनी सेना को नष्ट होता देख, महोदर को वानर सेना नष्ट करने की आज्ञा दी। सुग्रीव ने महोदर से भी काफ़ी देर युद्ध करके, उसे मार दिया। वानरों ने सिंहनाद किया। इस बीच महापार्श्व, अंगद की सेना के पास गया। अंगद से उसने द्वन्द्व युद्ध किया और कुछ देर बाद वह उसके हाथ मारा गया।

अपने साथ आये हुए तीनों मन्त्रियों को मरा देखकर, बड़े गुस्से में, रावण राम की ओर गया और उससे युद्ध करने लगा। दोनों ने एक दूसरे पर महास्त्रों का उपयोग किया। एक दूसरे के अस्त्रों को नष्ट कर दिया। आखिर, एक दूसरे ने मर्म स्थलों पर बाण छोड़े।

राम, जब रावण को बुरी तरह घायल करके विश्राम ले रहे थे तब लक्ष्मण ने रावण की ध्वजा उड़ा दी। विभीषण ने गदा लेकर, रावण के रथ के अश्वों को मार दिया। रावण ने रथ से उतरकर, अपने भाई विभीषण पर एक शक्ति का उपयोग किया। लक्ष्मण ने उस शक्ति को बीच में ही अपने बाणों से काट दिया।

यह रावण ने एक और बड़ी शक्ति लेकर, उसे घुमाकर, विभीषण पर छोड़नी चाही। लक्ष्मण ने इस तरह रावण पर बाण छोड़े कि वह शक्ति फेंकने न दी। आखिर रावण ने गुस्से में लक्ष्मण पर ही शक्ति छोड़ी। वह लक्ष्मण की छाती के अन्दर घुस गई। लक्ष्मण गिर गया।

राम को यह देख बड़ा गुस्सा आया। वे रावण पर तेज़ बाण छोड़कर उसे तंग करने लगे। रावण, राम का मुकाबला न कर सका और भाग गया।
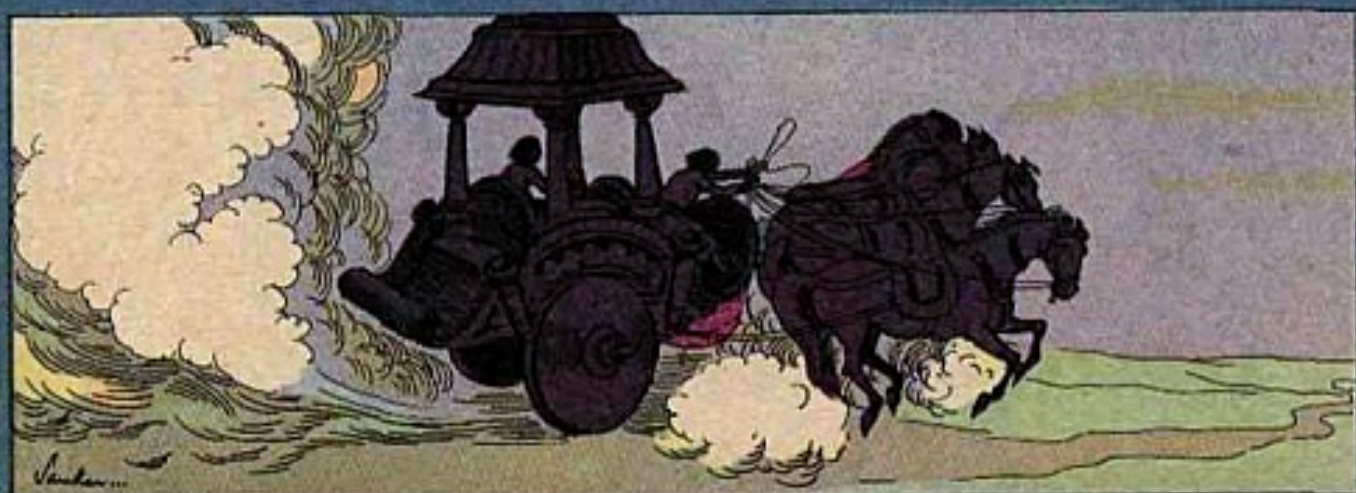
रुक्मांगद

[३]

जब ब्राह्मणों ने कहा कि मोहिनी ठीक ही कह रही थी और उसे एकादशी व्रत करने की ज़रूरत न थी, तो रुक्मांगद को गुस्सा आ गया। "अगर हरिहर ही आकर कहें कि यह व्रत करना ठीक नहीं है, तब भी मैं नहीं मानूँगा। एकादशी व्रत न करनेवाला मेरे राज्य में ही नहीं रह सकता है।"

मोहिनी ने गुस्से में आँखें लाल करते हुए रुक्मांगद से कहा—"यदि तुमने मेरी बात न मानी, तो तुम धर्मभ्रष्ट हो जाओगे। जब मुझ से विवाह किया था, तो कहा था कि मेरी इच्छा पूरी करोगे और अब प्रतिज्ञा भंग कर रहे हो। मैं तुम्हें छोड़ कर चली जाऊँगी।" वह उठकर चल पड़ी, ब्राह्मण भी उसके साथ चल दिये।

उसी समय धर्मांगद ने उसके चरणों को छूकर पूछा—"माँ, कहाँ जा रही हो? घर आइये।"

"तुम्हारे पिता वचन देकर मुकर गये हैं, मैं नहीं जाऊँगी?" मोहिनी ने कहा।

"जब तक जीवित हूँ, तो कोई नहीं कह सकता कि पिता वचन देकर मुकर गये हैं। मैं वचन पूरा करूँगा। चले आइये।" वह मोहिनी को अपने साथ लेकर पिता के पास गया, वे दुःख में थे। उनसे मोहिनी की बात मानने के लिए कहा।

"मैं यदि एकादशी व्रत छोड़ दूँगा, तो यमलोक में जन संख्या बढ़ जायेगी। मैं प्राण दे दूँगा, पर एकादशी व्रत नहीं छोडूँगा।" रुक्मांगद ने कहा।

अन्तिम पृष्ठ

धर्मांगद ने अपनी माँ सन्ध्यावली को बुलाया और बताया कि कैसे मोहिनी में और उसके पिता में मतभेद हो गया था, उससे उसने कहा जैसे भी हो, मोहिनी को एकादशी व्रत के लिए मनाओ।

सन्ध्यावली ने मोहिनी को मनाते हुए कहा—"यह सच है कि राजा तुम्हें वर देने के लिए मान गये थे, पर जो तुम माँग रहे हो, वह ठीक नहीं है। एकादशी व्रत का छोड़ना उनके लिए सम्भव नहीं है। छुटपन से ही वे एकादशी का उपवास करते आये हैं। इसे छोड़ दो, कुछ और माँगो। पति के हित के लिए, तुम छोटी हो, तब भी तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ।"

"तुम बड़ी हो, आदरणीय हो। मैं तुम्हारी बात न नहीं कर सकती। एकादशी व्रत नहीं छोड़ पाते हैं, तो उसके बदले एक और काम करवाओ। वह हम सब के लिए दुःखद ही है, पर यदि तुम वह करवा सकी, तो तुम्हें बड़ी कीर्ति मिलेगी।" मोहिनी ने कहा। यह सुन सन्ध्यावली ने कहा—"पति के हित के लिए जो काम चाहो, वह करने को तैयार हूँ।"

"यदि तुमने अपने लड़के का सिर काटकर दिया, तो मै सन्तुष्ट हो जाऊँगी।" मोहिनी ने कहा। सन्ध्यावली एक क्षण तो चौंकी। फिर धीरज करके, मुस्कराते हुए कहा, "तो धर्मांगद का सिर तुम्हें मिलेगा।"

वह अपने पति के पास गयी। "मोहिनी कह रही है कि यदि धर्मांगद का सिर काटकर दे दिया गया, तो वह एकादशी करने से नहीं रोकेगी। धर्म के लिए त्याग अच्छा है। मैंने उसको दस महीने गर्भ में ढ़ोया, प्रसव कष्ट उठाया। पाल पोसकर बड़ा किया है, जब मैं अच्छे लोकों की प्राप्ति के लिए यह कर सकती हूँ, तो आप भी इसके लिए मानिये।"

"अरे अरे, पुत्र हत्या ब्रह्म हत्या से भी बढ़कर है। ये मोहिनी जाने कहाँ से, धर्मांगद की मृत्यु बनकर आयी है।" कह कर, रुक्मांगद ने स्वयं मोहिनी से कहा।

"मोहिनी, एकादशी व्रत को छोड़ने और धर्मांगद को मारने के सिवाय कुछ और माँगो, मुझे पुत्र भिक्षा दो। उसके मर जाने से तुम्हारा क्या लाभ होगा?"

"मैंने तुम्हारे लड़के को मारने के लिए नहीं कहा है। धर्मांगद मेरा शत्रु नहीं है। एकादशी व्रत छोड़कर, आराम से राज्य करने के लिए कह रही हूँ। यही मेरी इच्छा है।" मोहिनी ने कहा। इतने में धर्मांगद ने एक तलवार लाकर, पिता के सामने रखी। "सत्यवक्ता, धर्म परायण होकर, आप क्यों आगा पीछा देख रहे हैं? मुझे इस तलवार से मार कर माँ की इच्छा पूरी कीजिये।"

रुक्मांगद ने पत्नी की ओर देखा। वह धीरज धरी बैठी थीं। "अरे अरे, क्यों लड़के को मारते हो, उपवास छोड़ दो, काफ़ी है।" मोहिनी कहती रही, पर रुक्मांगद ने उसकी न सुनी। उसने धर्मांगद को मारने के लिए तलवार

उठायी। मोहिनी मूर्छित हो गिर पड़ी। तलवार का धर्मांगद के गले पर लगना था कि विष्णु प्रत्यक्ष हुए। "तुम्हारी भक्ति से सन्तुष्ट हूँ। तुम, तुम्हारे पत्नी, पुत्र आराम से जीकर, बाद में मेरे लोक में आना।" विष्णु ने कहा।

यम और ब्रह्मा ने जो कुछ किया था, वह व्यर्थ गया। ब्रह्मा, यम के साथ, मोहिनी जहाँ गिरी पड़ी थी, वहाँ आया। उसने कहा—"मोहिनी, तुमने यथाशक्ति प्रयत्न किया। पर विष्णु भक्त पराजय नहीं जानते। तुम्हें एक काम पर भेजा। वह हुआ नहीं। इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है। तुम चाहो, जो वर माँगो।"

ब्रह्मा की यह बात, रुक्मांगद के पुरोहित वसु ने सुनकर, कहा—"छी छी, ये भी क्या देवता हैं। इस महापापी को वर दे रहे हैं। इसने जो पाप किया है, उसका कोई प्रायश्चित्त भी नहीं है। उसको नरक में भी स्थान नहीं है। इसे अभी भस्म किये देता हूँ। यदि तुमने रोका, तो तुम्हें भी भस्म कर दूँगा।" कहकर, उसने अपने पात्र का पानी, मोहिनी के सिर पर छिड़का।

तुरत मोहिनी के शरीर में से ज्वालायें निकलने लगीं और वह भस्म हो गई।

तब ब्रह्मा ने उस ब्राह्मण को नमस्कार करके, मोहिनी के बारे में सब कुछ बताकर कहा—"भक्ति के प्रभाव को निरूपित करने के लिए यह सब हुआ है। राजा और उसकी पत्नी पुत्र को उत्तम लोक मिल ही गये हैं। इसलिए क्रुद्ध न हो।"

रुक्मांगद के पुरोहित वसु ने मोहिनी को फिर से सशरीर बनाने का अनुग्रह किया। [समाप्त]

४१. किम्बर्लें की हीरों की खान

इन प्रसिद्ध खानों में खोदना १८७१ में शुरु हुआ। १८९७ में, ३४ एकड़ भूमि को ४५० फीट गहरा खोदा गया। १९०१ में, जब इन खानों में काम रोका गया, तो इनकी गहराई २,६०१ फीट हो गई थी। यह अफ्रीका के केप प्रान्त में है।

Photo by A. L. Syed
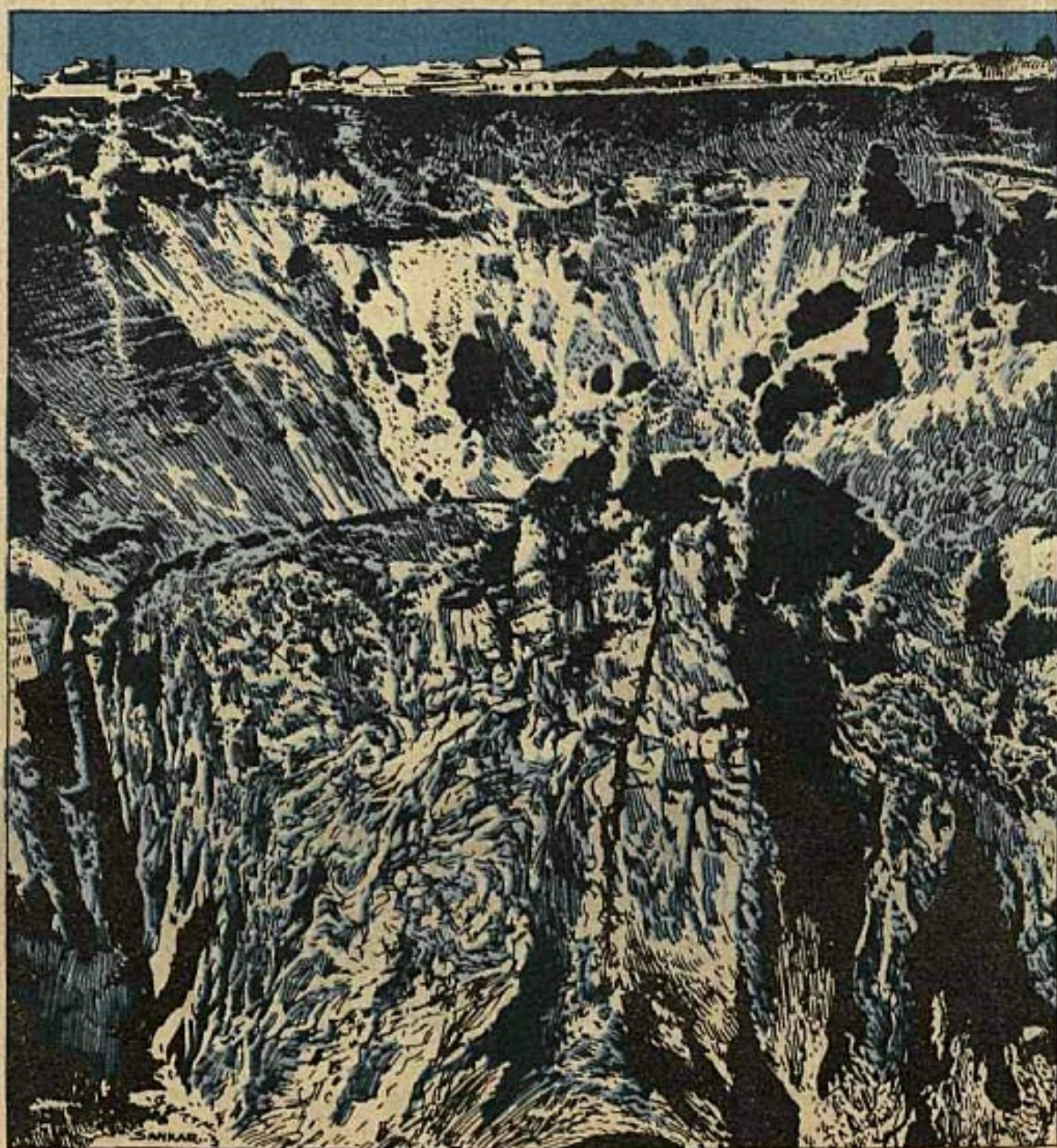
पुरस्कृत

यह हिम्मत का काम है भाई !

प्रेषिका :

Photo by A. L. Syed
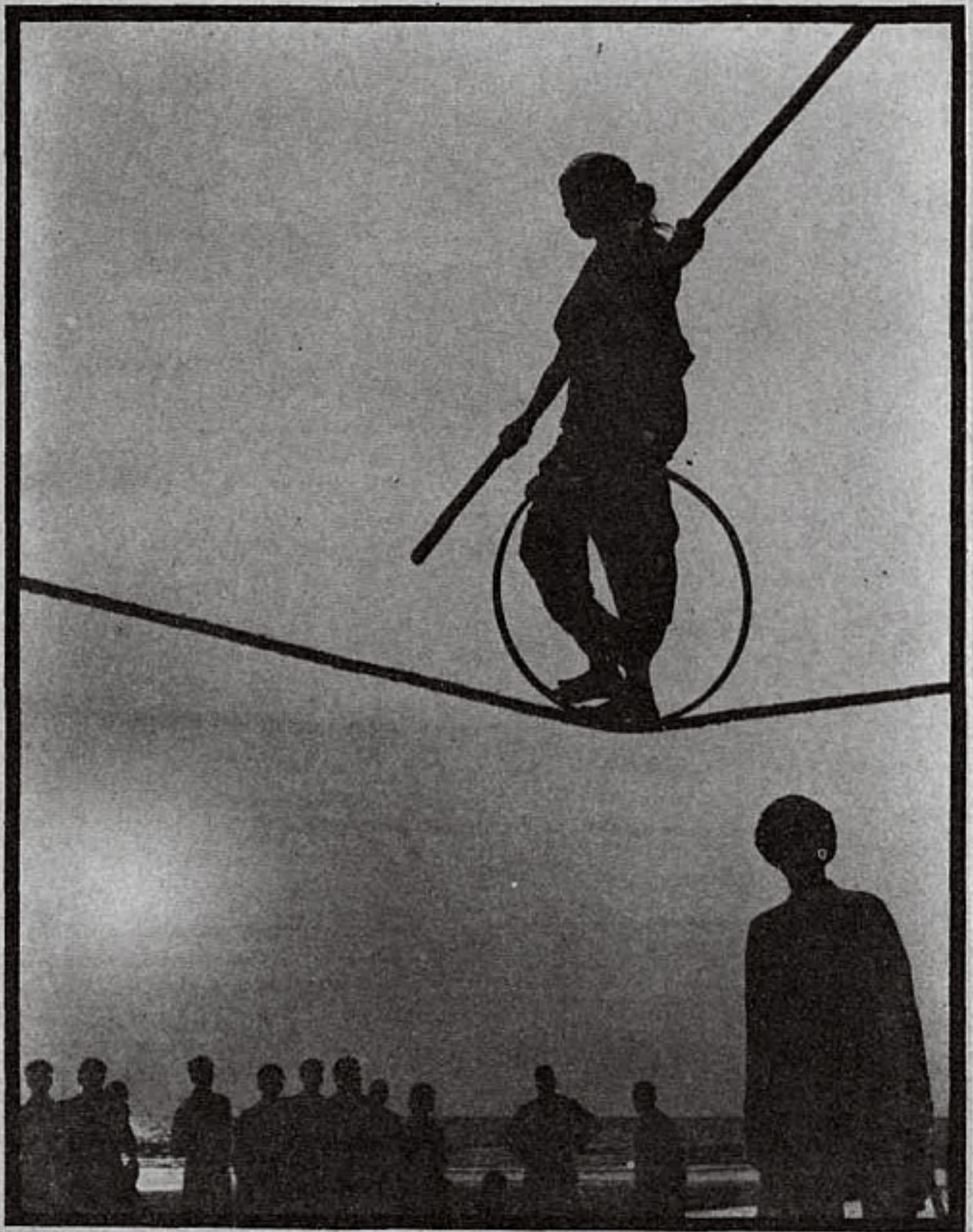
पुरस्कृत परिचयोक्ति

इसको कहते है चतुराई !!

प्रेषिका : श्रीमती विमला शर्मा - दिल्ली

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जुलाई १९६५ :: पारितोषिक १०)
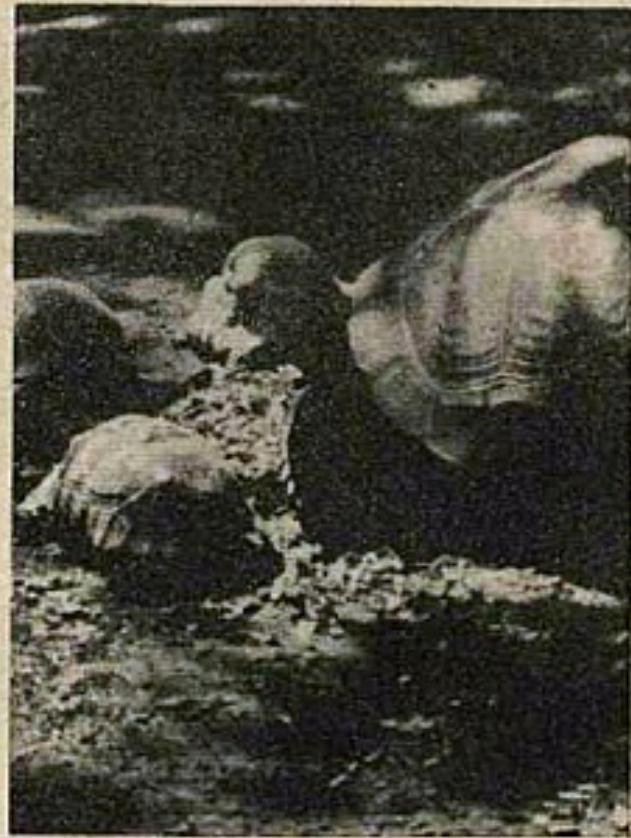
कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ मई १९६५ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

मई – प्रतियोगिता – फल

मई के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १०. रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : **यह हिम्मत का काम है भाई !**

दूसरा फ़ोटो : **इसको कहते है चतुराई !!**

प्रेषिका : **श्रीमती विमला शर्मा,**
भारतीय विद्या भवन, नयी दिल्ली

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd.,